INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI NO. 68884/96

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीअै।।

आत्म मार्ग

August 2019

श्री गुरू अरजन देव जी श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के प्रथम प्रकाश करने के लिए जाते हुए

श्री गुरू गरन्थ साहिब जी के प्रथम प्रकाश दिनांक 16 अगस्त सन् 1604 ई. को श्री हरिमन्दिर साहिब में श्री गुरू अरजन देव जी ने करवाए। बाबा बुड्ढा जी, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी को अपने शीश पर सुशोभित करके रामसर साहिब से श्री हरि मन्दिर साहिब की तरफ ले जाते हुए, साथ में श्री गुरू अरजन देव जी चवर साहिब की सेवा करते हुए तथा पीछे कीर्तन करते हुए श्रद्धालूजन

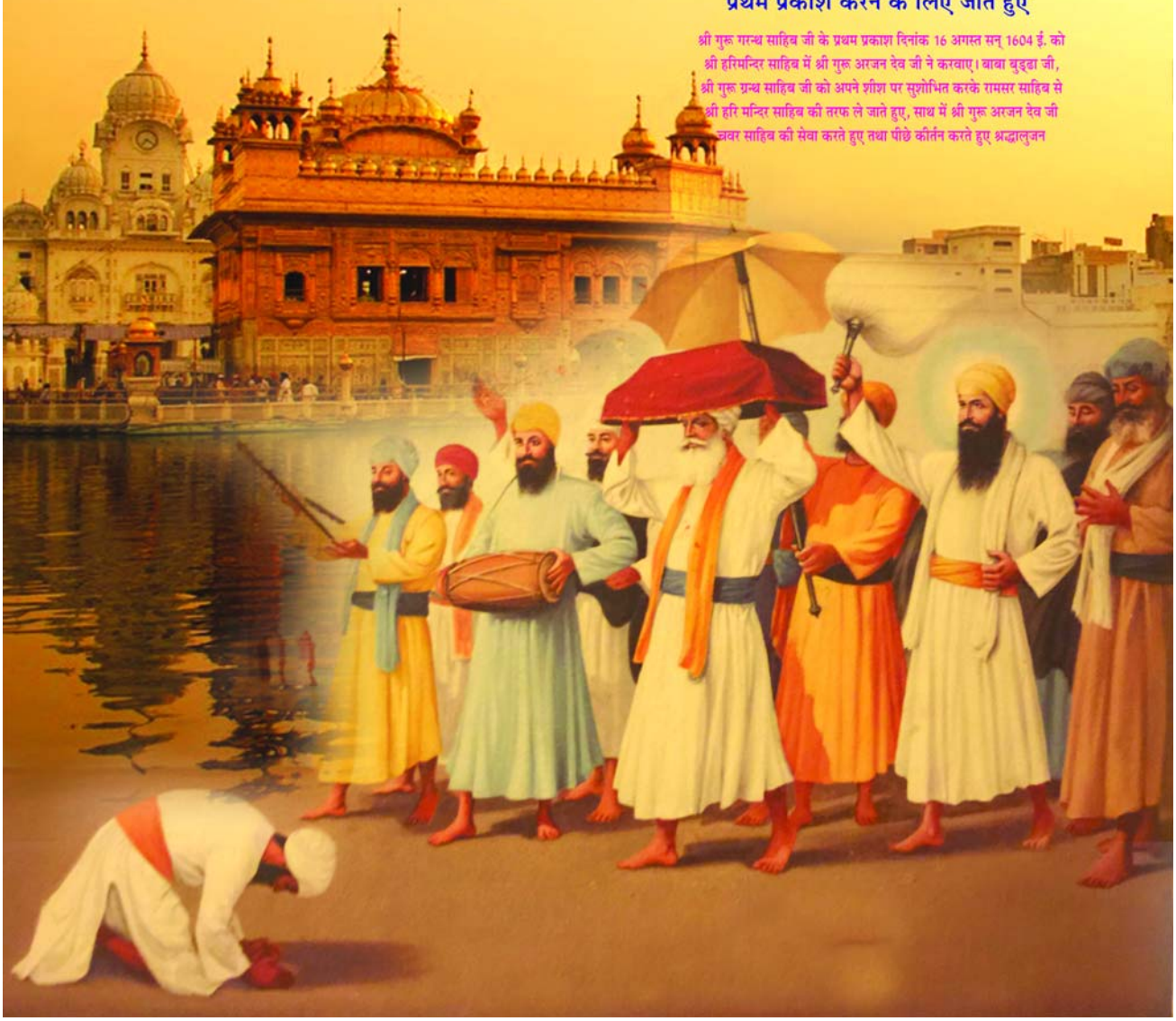

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी गुरुद्वारा साहिब **Fremont (U.S.A)** में
कीर्तन द्वारा संगत को निहाल करते हुए। नीचे - कीर्तन का रसास्वादन करते हुए श्रद्धालुजन

आत्म मार्ग

वर्ष चौबीसवां - अंक सातवां, अगस्त 2019

गुरद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन	एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी	सन्त बाबा हरपाल सिंह जी
प्रबन्ध सम्पादक	मुख्य सम्पादक
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह	डा. जगजीत सिंह

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/-	(For outstation cheques)

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,
भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(PSEB) अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर
98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

2. बारहमाहा 7
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

3. गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ 11
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. बाबाणियाँ कहानियाँ 19
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. कितु बिधि मनु धीरे।। 23
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

6. सत संगति कैसी जाणीअै।। 32
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

7. नूरानी मिलाप - 13 37
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

8. भाई नंद लाल जी 39

9. श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार निजी जीवन जीने का ढंग 41
डा. जगजीत सिंह

10. ईश्वर अमोलक लाल 44
रचना - सन्त ईशर सिंह जी, राड़ा साहिब

11. श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की सम्पादन कला 46
डा. सुरिन्दर सिंह कोहली

12. गुरबाणी अर्थ भण्डार 49
सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

13. वारां भाई गुरदास जी 51
डा. भाई बीर सिंह जी

14. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 53
डा. स्वामी राम जी

15. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 55

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

बाणी बिरलउ बीचारसी जे को गुरमुखि होइ ॥
अंग - 935

पारब्रह्म परमेश्वर बेअन्त है। बेअन्त का तात्पर्य है कि जिसका कोई अन्त ही नहीं है यानि कि वह अथाह है। *'तू बेअंतु को विरला जाणै।।'* (अंग - 562) उस अकालपुरुष की रचना को कोई विरला ही जान सकता है। उसके बारे में कुछ भी कहना 'बात अगम की' बन जाती है। *'केवडु वडा डीठा होइ।।'* (अंग - 9) के भावार्थ में वह कितना बड़ा है? जवाब मिलता है कि क्या बतलाएँ यदि आँखों से देखा हो तब तो बताया जा सकता है, लेकिन विचार करने के लिए गुरू जी ने अन्य दरवाजे भी खुले रखे हैं -

एवडु उचा होवै कोइ ॥
तिसु उचे कउ जाणै सोइ ॥ अंग - 5

जेवडु आपि तेवड तेरी दाति ॥
जिनि दिनु करि कै कीती राति ॥ अंग - 10

उस वाहिगुरू जी को जानने के लिए उसके द्वारा रचित रचना को जानना जरूरी है। जितना बड़ा वह स्वयं है, उतनी ही बड़ी उसकी रचना है -

कोटि ब्रहमंड को ठाकुरु सुआमी
सरब जीआ का दाता रे ॥ अंग - 612

वह तो करोड़ों ब्रह्मांडों का स्वामी स्वयं है, करोड़ों से बाद भी है, वह लेखे जोखे से बाहर है। श्री गुरू नानक देव जी का तेरह-तेरह तौलने का सिद्धान्त इसी की पुष्टि करता है। हम लोग तो केवल बुद्धिमण्डल के दायरे में ही रहकर एक ब्रह्मांड को भी पूरी तरह से जान नहीं सकते हैं लेकिन वह तो असंख्य ब्रह्मांडों का स्वामी है, इसलिए पूरी तरह से उसे जान पाना ना मुमकिन है। यह कृपा वह अपने व्यारों के ऊपर स्वयं करता है -

ब्रहम गिआनी सभ स्रिसटि का करता ॥
ब्रहम गिआनी सद जीवै नही मरता ॥ अंग - 273

अकाल पुरुष वाहिगुरू जी स्वयं 'आदि ..... है।' चहुँओर उसी का विस्तार है -

आपीनै आपु साजिओ आपीनै रचिओ नाउ ॥
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ ॥
अंग - 463

उसके बिना कोई दूसरा नहीं है। **God is One** भावार्थ 'परमात्मा एक है' का यही सिद्धान्त है। अब उस ऊँचे को समझना बुद्धिमण्डल का खेल नहीं है। केवल ब्रह्मज्ञान अवस्था प्राप्त करके ही उसकी झल्कियाँ मिल सकती हैं। बाबा फरीद जी के अन्तिम वचन थे - *'अलहू अल कयूम'* भावार्थ यहाँ पर अल्लाह ही सदैव रहने वाला है यानि कि वही शाश्वत है। यह सिद्धान्त गुरमति के *'नाम रहिओ साधू रहिओ रहिओ गुरु गोबिंदु।।'* (अंग - 1429) तथा *'आदि सचु जुगादि सचु'* के सिद्धान्त के साथ मिलता जुलता है। दूसरा सिद्धान्त *'ब्रहम गिआनी सद जीवै नही मरता।।'* (अंग - 273) तथा *'जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए।।'*(अंग - 749) भावार्थ यहाँ पर केवल परमात्मा सदैव रहने वाला है, दूसरा उसके प्यारे हमेशा के लिए अमर हैं। इतने बड़े वाहिगुरू जी की गम्यता को जानना कोई आसान खेल नहीं है। *'एवडु उचा होवै कोइ।। तिस उचे कउ जाणै सोई।।'* (अंग - 5) उसे जानना उसके प्यारों के हिस्से ही आया है। *'सन्त सहाई जीअ के भवजल तारणहार।। सभ ते उचे जाणीअहि नानक नाम पिआर।।'* (अंग - 929) परमात्मा के प्यारे सन्तजन सबसे ऊँचे हैं। तमाम योनियों में मनुष्य सर्वोत्तम है। मनुष्यों में से सन्तजन, भक्तजन सबसे ऊँचे हैं। वे सबसे ऊँचे क्यों हैं? क्योंकि उनका नाम के साथ प्यार है। वे अभेदावस्था को प्राप्त हो चुके हैं।

हरि हरि जन दुई एक है,
बिब बिचार कछु नाहि॥
जल ते उपज तरंग जिउ
जल ही बिखै समाहि॥ बचित्र नाटक

की उच्चतम अवस्था को प्राप्त हैं।

इस सारे विस्तार की समझ भावार्थ लोक व परलोक की समझ हमें गुरवाणी में से प्राप्त होती है। यह धुर दरगाह की बाणी है, अकाल पुरुष वाहिगुरू जी के अपने स्वयं के बोल हैं। बाणी, गुरू तथा वाहिगुरू जी एक ही रूप हैं -

बाणी गुरु गुरु है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे।।
अंग - 982

जहाँ पर गुरवाणी गुरू रूप है, वहीं पर सारी जीवन-युक्ति लोक तथा परलोक की भी उसी में से प्राप्त होती है। सच्चे पातशाह श्री गुरू अरजन देव महाराज जी ने बहुत ही महान कृपा की है कि इस जनता के उद्धार के लिए तथा सुन्दर जीवन युक्ति के लिए इस पावन वाणी का संग्रह व सम्पादन करके सम्पूर्ण मानवता पर आदि ग्रन्थ साहिब जी के रूप में कृपा की है। जो भी इस पावन वाणी के आशय के अनुसार अपने जीवन को ढालेगा उसका लोक तथा परलोक दोनों संवर जाएँगे। आवश्यकता है विचार की -

थाल विचि तिंनि वसतू पईओ सतु संतोखु वीचारो ॥
अंम्रित नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो ॥ जे को खावै जे को भुंचै तिस का होइ उधारो ॥
एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरि धारो ॥
तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रहम पसारो॥
अंग - *1429*

मनुष्य को सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक क्षेत्र में किस प्रकार का जीवन व्यतीत करना है, गुरवाणी प्रत्येक क्षेत्र में अगुवाई करती है। संसार के अन्दर रहते हुए स्वाभाविक है कि अन्य जीवों व प्राणियों के साथ भी वास्ता पड़ना ही है लेकिन उनके साथ हमने किस प्रकार का बर्ताव करना है, इसकी समझ पावन वाणी में से प्रत्येक प्राणी को प्राप्त होती है। यह सार्वभौमिक सच्चाई है, ग्लोबल सच्चाई है। यह सबको बिना किसी भेदभाव के अपने आलिंगन में लेती है। सारी विचार चर्चा का तात्पर्य यह है कि गुरवाणी ही हमारे जीवन जीने की कला तथा मुक्ति का आधार है। बस आवश्यकता है उसके अनुसार अपने जीवन को ढालने की। इस सम्बन्ध में आत्म मार्ग के प्रस्तुत अंक में पाठकजनों के कल्याणार्थ 'गुरवाणी जीवन जाच' शीर्षक के अधीन डा. जगजीत सिंह (मुख्य सम्पादक) द्वारा रचित लेख प्रकाशित किया जा रहा है। 31 अगस्त को श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पहले प्रकाश पर्व तथा श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की सम्पादन कला से सम्बन्धित भी प्रकाशित किया जा रहा है। उम्मीद है कि पाठकगण इन्हें पढ़कर लाभ प्राप्त करेंगे और एक सुन्दर जीवन जीने की कला के धारणी होंगे। पाठकजनों को ज्ञात है कि अगस्त माह में रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के संस्थापक प्यारे महापुरुषों की जीवन संगिनी सम्माननीया माता (बीजी) रणजीत कौर जी का जन्म दिवस 8 अगस्त को आ रहा है। रतवाड़ा साहिब में यह दिवस गुरमति समागम के रूप में मनाया जा रहा है। समस्त संगत को ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा इस गुरमति समागम में पहुँचने के लिए हार्दिक निवेदन किया जाता है। इसी माह में 25 अगस्त को श्रीमान सन्त बाबा ईशर सिंह जी, राड़ा साहिब वालों की पावन स्मृति में भी समागम आयोजित किए जाते हैं। इस सम्बन्ध में प्रस्तुत अंक के माध्यम से उनके अनुभवी प्रवचनों की श्रृंखला का प्रकाशन भी शुरू किया जा रहा है। उम्मीद है कि पाठकगण इन अनुभवी प्रवचनों को पढ़कर रूहानी तरक्की में अद्भुत वृद्धि की अनुभूति करेंगे।

रतवाड़ा साहिब गुरमति के प्रचार तथा परोपकार का केन्द्र है। इसी श्रृंखला में ट्रस्ट के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा 19 जून से 7 अगस्त तक अमेरिका में गुरमति प्रचार की श्रृंखला चलाकर संगत को गुरु-शब्द के साथ जोड़ा जा रहा है। बाबा जी द्वारा विदेशों में रह रहे अनेकों श्रद्धालुजनों को सिक्खी विरासत से भिज्ञ करवाया जा रहा है। अनेकों श्रद्धालुजन, उनके रसयुक्त कीर्तन और गुरमति विचारों को सुनकर लाभ प्राप्त कर रहे हैं। इसी गुरमति प्रचार श्रृंखला को विदेशों में और आगे बढ़ाते हुए आप जी अगस्त तथा सितम्बर माह में कनाडा की धरती पर संगत को कथा-कीर्तन द्वारा निहाल करेंगे। कनाडा के कार्यक्रमों का ब्यौरा प्रस्तुत अंक के टाइटल रंगीन पृष्ठ पर दिया जा रहा है। संगत को निवेदन है कि वे निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार हाजिरी भर कर लाभ प्राप्त करें। पाठकगण कनाड़ा में रहने वाले अपने मित्रगणों व सगे-सम्बन्धियों को इन कार्यक्रमों के बारे में जानकारी दें ताकि वे सभी कथा-कीर्तन का लाभ प्राप्त कर सकें तथा विदेशों की धरती पर रहते हुए भी अपनी विरासत के साथ जुड़े रह सकें। उपरोक्त सारी विचार का तात्पर्य यह है कि आधुनिक दौर में, जहाँ माया की चकाचौंध प्रत्येक समय मनुष्य को भ्रमित कर रही है, इस प्रकार के समय में केवल और केवल श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पावन मार्ग-दर्शन के द्वारा ही सम्पूर्ण मानवता को सुख शान्ति प्राप्त हो सकती है। यही आत्म मार्ग का संकल्प है और यह इसका लक्ष्य है। इस संकल्प की पूर्ति के लिए ही प्रत्येक माह महापुरुषों तथा अन्य गुरुमुख प्यारों के अनुभवी प्रवचन आप समस्त पाठकगणों तक पहुँचाए जा रहे हैं। ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब तथा आत्म मार्ग संस्था सदैव ही संगत की सेवा में जुड़े रहने के लिए प्रार्थनारत है।

भादुइ

(भादुइ माह की संक्रान्ति - 17 अगस्त दिन शनिवार)

सन्त वरियाम सिंह जी
बानी वि. गु. रू. मिशन

भादुइ भरमि भुलाणीआ दूजै लगा हेतु।
लख सीगार बणाइआ कारजि नाही केतु।
जितु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु।
पकड़ि चलाइनि दूत जम किसै न देनी भेतु।
छडि खड़ोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु।
हथ मरोड़ै तनु कपे सिआहहु होआ सेतु।
जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु।
नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ प्रभ देतु।
से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखणवाला हेतु॥

अंग - 134

सावन, वर्षा की झड़ियां लगाता हुआ, ठण्डक बांटता हुआ, रस, रंग में लीन करने वाला अपनी चाल चलता, अपना करिश्मा दिखा, समय के पर्दे के पीछे छिप गया। अब बारी आई - भादों के महीने की, जिसमें उमस पड़ती है तथा गर्मी बढ़ जाती है, दम घुटता है, चलते राहगीर वृक्षों की घनी छाया के नीचे बैठकर, हवा चलने की आशा करते हैं। अनेक जीव - सांप, बिच्छु, कीड़े-मकौड़े धरती की उमस में से बाहर आकर ठण्डक की उम्मीद करते हैं। वर्षा होती है, छराटों के रूप में; हवा बन्द हो जाती है, वर्षा के बाद बेचैन करने वाली गर्मी बढ़ जाती है; वर्षा की ठण्डक महसूस नहीं होती। प्रभु के प्यार को भूलकर, माया के प्यार में यह जीव मस्त हो गया। आन्तरिक ज्ञान अलोप हो गया। माया के रसों में उलझ गया तथा भ्रम में पड़कर परम तत्व से अनभिज्ञ हो गया। भेद भ्रम के पैदा होने से इस अखण्ड ज्योति से अपने आप को अलग समझ बैठा, जैसे सूरज, चन्द्रमा, गगन में चमक रहे हैं, उनकी परछाईं पानी से भरे बर्तनों पर पड़ रही है, उस बिम्ब का प्रतिबिम्ब, बिम्ब से अलग दिखाई देता है। पानी हिलता है तो परछाईं के चन्द्रमा तथा सूरज भी हिलते नज़र आते हैं, पर सूरज तथा चन्द्रमा अपनी जगह पर स्थिर हैं, उनके अन्दर किसी प्रकार की अस्थिरता नही, केवल प्रतिबिम्ब में; यह हिलजुल प्रतीत हो रही है, इसी प्रकार परम चेतन ज्योति अपना खेल दिखा रही है, उसका प्रतिबिम्ब हमारे अन्तसकरण पर पड़ रहा है तथा हउमै की चार दीवारी में एक अलग होश, हमारे अन्दर पैदा हो गई, जिसे हउमै की सुरत कहा जाता है, जिसके बारे में महाराज जी फ़रमान करते हैं -

भोलिआ हउमै सुरति विसारि।
हउमै मारि बीचारि मन गुण विचि गुणु लै सारि॥

अंग - 1168

इस प्रकार कृ-तत्व कर्म का भ्रम पड़ गया। दुख-सुख, खुशी-गमी, अपना-पराया, जात-जन्म, देश-परदेश, अपने-बेगाने उस सुरत में से दिखाई देने लग पड़े तथा भ्रम में पड़ा हुआ, यह बिल्कुल अज्ञानता के अन्धे कूएं में गिर कर, बेबस होकर रोता, कुरलाता है। इसका प्यार उन चीज़ों के साथ हो गया जो संयोग से प्राप्त होती हैं तथा वियोग के वश होकर

बिछुड़ जाया करती हैं। यह जादू का जाल, जादू के मिलाप तथा बिछोह, इसके मन में हित तथा अहित पैदा कर रहे हैं। कुछ वस्तुओं के साथ राग हो गया और कुछ चीज़ों से द्वैष पैदा हो गया। वाहिगुरू को छोड़कर जो इसके सदा साथ रहता है, उन चीज़ों के साथ इसका प्यार पड़ गया, जो इसे जन्म मरण के चक्करों में धकेले रहती है -

संगि सहाई सु आवै न चीति।
जो बैराई ता सिउ प्रीति॥ *अंग - 267*

महाराज जी ने भादों के महीने में इस भुलक्कड़ जीव को प्रकट करते हुए फ़रमान किया है कि ऐ जीव! तू उन चीज़ों की ओर खचित हो गया है, जिन्होंने तेरा साथ नहीं निभाना। तुझे तो चाहिये था कि तू वह श्रृंगार बनाता, जिनसे प्रभावित होकर तुझे एकंकार जी का सच्चा-स्वच्छ प्यार प्राप्त होता -

भै कीआ देहि सलाईआ
नैणी भाव का करि सीगारो॥ *अंग - 722*

पर इसके विपरीत तूने अपने चोले को माया के बदबूदार कुष्ट रंग में रंग लिया। अब बता, इतनी बदबू वाले को अपने निकट कौन आने देता क्योंकि उस सच्चे कन्त को काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, आशा, तृष्णा, अन्देशा, डर, बेप्रीति के भद्दे तथा बदबूदार रंगों में रंगा हुआ चोला कैसे अच्छा लगे?

इहु तनु माइआ पाहिआ पिआरे
लीतड़ा लबि रंगाए।
मेरै कंत न भावै चोलड़ा पिआरे
किउ धन सेजै जाए॥ *अंग - 721*

जो जिन श्रृंगारों से अपनी देही को श्रृंगारता है - बढ़िया से बढ़िया पाऊडर आदि का प्रयोग करके, सुन्दर से सुन्दर वस्त्र पहनकर और अनेक प्रकार के श्रृंगार साधनों का प्रयोग करके। पर प्यारे! तूने अपने अन्तसकरण का तो श्रृंगार नहीं किया, उसे पवित्र न किया; उसे नाम का साबुन लगाकर साफ न किया तो फिर बता इन बदबूदार श्रृंगारों को देखकर तो प्रभु ने अपना प्यार तुझे नहीं बक्श देना। इसकी जगह इस श्रंगारी देह ने एक रस नहीं रहना। इसमें तीन रंग अवश्य आते हैं -

बाल जुआनी अरु बिरध फुनि
तीनि अवसथा जानि॥ *अंग - 1428*

तथा चौथी अवस्था इसके समाप्त होने की होती है। यह मृत हुआ जड़रूप हो जाता है तथा प्रेत कहलाता है। कर्मों का फल देने वाली शक्तियां, गुप्त ताकतें, अव्यक्त रूप में आकर इस भुलक्कड़ जीव आत्मा को ग्रस लेती हैं। चीखता चिल्लाता परलोक को चला जाता है -

बारि विडानड़ै हुंमस धुंमस कूका पईआ राही॥
अंग - 520

जिनके लिये सारा जीवन बर्बाद कर दिया तथा गलती से इस बात की ओर झुक गया है कि मैंने अपना यह संसार संवारना है, पैसे इकट्ठे करने हैं, कोठियां, दुकानें, इन्डस्ट्रीज़ तथा ज़मीन जायदाद बनानी हैं। माया, पापों के बिना इकट्ठी नहीं होती। सो बहु प्रपंच करके धन एकत्र करता रहा तथा संसार की ओर ही झुका रहा, संसार को ही संवारता रहा। इसे ज्ञान नहीं था कि मैं इस संसार में रहता हुआ परलोक को श्रृंगार लूँ, जहाँ जाकर मैंने रहना तथा बसना है। मूर्ख होकर दुनियांदारी में उलझा रहा, पर यदि इस परलोक को संवार लेता तो यहाँ से जाते समय इसे मौत जैसी भयानक घटना से बिल्कुल डर न लगता, क्योंकि उसने पहले ही अपना परलोक संवार लिया था।

एक साखी आती है कि एक राज्य में जनता ने यह कानून बना दिया था कि कोई भी राजा 20 वर्ष से अधिक तख्त पर नहीं बैठ सकता। 20 वर्ष बाद उसे तख्त से उतार कर, दूसरा राजा उसकी जगह बिठा दिया जाता था तथा पहले राजा को, जिसने राजसुखों का आनन्द लूटा होता था, विषय भोग से रसहीन भोगों में मस्त रहा, विषय विकारों की अन्धेरी में भटकता रहा; अब जब उसे निर्जन टापू में भेजने के लिये जहाज में बिठा रहे हैं तो वह रोता-चिल्लाता है कि वहाँ तो निर्जन वन हैं, कुछ खाने पीने को नहीं मिलता, फलहीन वृक्ष हैं, बड़े-बड़े जंगली जानवरों से भरा पड़ा है, मैं कहाँ बैठूंगा? कहाँ सोऊंगा? मेरी सुरक्षा यहाँ तो मेरे अंगरक्षक (body-guard) करते थे, अब मेरी रक्षा कौन करेगा? कोई शस्त्र भी साथ नहीं ले जाने देते; वहाँ साथ ले जाने के लिये कुछ भी पल्ले नहीं बाँधने देते। हाय! मेरे बड़े मन्द भाग्य, मैंने पहले क्यों न सोचा। यदि मैंने पहले ध्यान दिया होता तो मैं जरूर

कोई न कोई प्रयास करता, कुछ सोचता, उस स्थान को श्रृंगारता, जहाँ पहुँच कर अन्तिम समय में रहना था। सो इस प्रकार रोते कुरलाते उस निर्जन टापू में ले जाकर छोड़ दिया। वहाँ तड़प-तड़प कर भूखा प्यासा रह कर, किसी न किसी जंगली जानवर का भोजन बन जाता। उसकी जगह दूसरा राजा बना लिया जाता।

एक राजा जब तख्त पर बैठा तो उसने तख्त की समाप्ति के बाद जहाँ जाना था, उसके बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त की तथा अपने राज्य काल में ही बड़े-बड़े योग्य अभियन्ता (Engineers) भेज कर उस निर्जन वन का ऐसा श्रृंगार किया कि उसे देखकर यात्री बहुत ही आकर्षित होने लगे। भवनों का निर्माण कर दिया, कहीं बड़े-बड़े सुन्दर पार्क, कहीं ठंडक पैदा करने वाले बड़े-बड़े फव्वारे, कहीं फलदार अनेक प्रकार के वृक्ष लगवा दिए, खेती बाड़ी के लिये जमीनें समतल करा दीं तथा अपने मित्रों सहयोगियों, सूझवान योग्य व्यक्तियों को, एक बहुत ही सुन्दर शहर बनाकर कोठियां दे दीं, पढ़ाई के लिए उच्च कोटि के विश्वविद्यालय (Universities) स्थापित कर दीं। जिसने भी सुना उसका जी करता कि जाकर उस पुराने निर्जन वन में बसना शुरू कर दे। दूर दराज़ से सारी दुनियां के लोग उस आकर्षक टापू को देखने आते तथा लुभावने दृश्य देखकर मोहित हो जाते। उनका मन करता कि यहीं पर ही रिहायश कर ली जाये। 20 वर्ष के अन्दर एक बैकुंठ पुरी बना दी। खर्चों के लिए माया जमा करवा दी, बैंक भर दिये, कहीं कमी न आ जाये। जब राजा का राज्यकाल समाप्त होने में 2 महीने अभी रहते थे तो उसने अपनी प्रजा से कहा कि तुम मुझे छुट्टी दे दो तथा अपना नया राजा चुन लो।

जनता बहुत लायक थी, उन्होंने कहा कि महाराज! अब आपको तख्त छोड़ने की आवश्यकता नहीं। आप जैसा राजा हमें भी नहीं मिलेगा, आप यहीं पर ही रहो। पर वह राजा वहाँ जाने में बहुत ही खुशी महसूस कर रहा था।

अब तुम स्वंय सोचो कि उस राजा ने इस राज्य में रहते हुये, जहाँ बाद में जाकर रहना-बसना था, उसे संवार लिया। इसी प्रकार जिन्हें जीवन युक्ति का ज्ञान हो गया है, वे अपना परलोक संवार लेते हैं, जहाँ जाकर उनका आदर सत्कार होना है। उन्हें यह जगत छोड़ते समय कोई दुख नहीं हुआ करता बल्कि प्रसन्नता होती है। इस स्थान के लोग भी उसके प्यार में, सदियां बीत जाने के बाद भी उसे नहीं भूलते, उसकी बरसी मनाते हैं, यादगार मनाते हैं, उपदेशों को एकत्र करके मार्ग खोजते हैं। वे यहाँ भी प्रसन्न हैं तथा आगे जाकर भी खुशी-खुशी रहते हैं -

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै
मेरे मनु आनंदु।
मरने ही ते पाईऐ
पूरनु परमानंदु॥ *अंग - 1365*

कबीर जा तूं जनमिआ
जग महि जग हसै तूं रोइ।
ऐसी करनी कर चलउ
पिआरे तूं हसै जग रोइ॥

सो यह एक दृष्टांत है - बात को भली भान्ति समझने के लिए, जो इस महीने में गुरू महाराज जी ने बताई है। इस जीवन के दो पक्ष हैं। भादों के महीने में उन मन्द भागियों का जिक्र किया है, जिन्होंने संसार में आकर 'आह जग मिठा, अगला किन डिठा' (भाव यह संसार अच्छा है, अगला किसने देखा) के धुंधले विचार अनुसार अपना जीवन नष्ट कर दिया। उसका संसार में आने का परम मनोरथ प्रभु प्राप्ति था -

गुर सेवा ते भगति कमाई।
तब इह मानस देही पाई।
इस देही कउ सिमरहि देव।
सो देही भजु हरि की सेव।
भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु।
मानस जनम का एही लाहु॥ *अंग - 1159*

भई परापति मानुख देहुरीआ।
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।
अवरि काज तेरै कितै न काम।
मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥ *अंग - 12*

पर इसके स्थान पर, भ्रम में पड़कर माया के साथ प्यार कर बैठा। माया के प्यार में दुख ही दुख होता है, सुख का नामोनिशां भी नहीं होता। जैसे रेते में से तेल नहीं निकल सकता, इसी तरह मायिक पदार्थों में से कभी भी सुख की प्राप्ति नहीं हुआ करती।

भादों के महीने के बारे में गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं -

भादुइ भरमि भुलाणीआ दूजै लगा हेतु।
लख सीगार वणाइआ कारजि नाही केतु।
जितु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु।
पकड़ि चलाइनि दूत जम किसै न देनी भेतु।
छडि खड़ोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु।
हथ मरोड़ै तनु कपे सिआहहु होआ सेतु॥ अंग - 134

सो यह जीवन ऐसा भूला कि इसे यह बिल्कुल भी भूल गया कि मैंने इस संसार में से जाना है, भूल गया वाहिगुरू जी की कुदरत को, अटल नियम को -

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु॥ अंग - 135

यह तो आम नियम है कि जमीन में यदि हम कीकर के बीज डालेंगे तो क्या अंगूर प्राप्त करने की आशा कर सकते हैं? सारा साल ऊन की कताई की जाये तथा मन में यह इच्छा रखें कि रेशम पहनेंगे; यह कैसे हो सकता है?

फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआं किकरि बीजै जटु।
हंढै उंन कताइदा पैधा लोड़ै पटु॥ अंग - 1379

यह तो इस धरती में जैसा तू बीज डालेगा, वैसा ही फल तुझे प्राप्त होगा। आक बीज कर, आक की डोडियों से कभी भी आम जैसी मिठास पैदा नहीं होती। आम खाने के लिये तुझे पहले ही पूर्ण सावधानी के साथ ऐसे आम बीजने होंगे, जिनकी मिठास, जिनका गूदा, अन्दर आनन्द पैदा करता है; भोगों के बीज बोकर कभी भी नाम रस की प्राप्ति नहीं हो सकती। महाराज जी फ़रमान करते हैं -

जेहा बीजै सो लुणे करमा संदड़ा खेतु॥ अंग - 135

अन्त में आप हमें प्रेरणा देते हैं कि अविश्वासी रहकर अपनी जीवन बर्बाद मत करो। प्रभु का नाम भवजल पार करने के लिये एक बहुत बड़ा जहाज है तथा गुरू का प्यार नर्कों की आग को निकट नहीं आने देता।

नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ प्रभ देतु।
से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखणवाला हेतु॥
अंग - 135

रे रे दरगह कहै न कोऊ।
आउ बैठु आदरु सुभ देऊ॥ अंग - 252

जिस कार्य को करने के लिये हम संसार में आए हैं, सावधान होकर, विषय विकारों को पीठ दिखाकर, विषय-विकारों की वास्तविकता को समझकर, ऐसे काम करें, जिससे हमें खुशियां प्राप्त हों। वह है, प्रभु सुमिरन, प्रभु के प्यार की प्राप्ति। जो प्रभु प्यारों से ही मिल सकता है।

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ।
राम नामु संतन घरि पाइआ।
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि।
राम नामु हिरदे महि तोलि।
लादि खेप संतह संगि चालु।
अवर तिआगि बिखिआ जंजाल।
धंनि धंनि कहै सभु कोइ।
मुख ऊजल हरि दरगह सोइ॥ अंग - 283

आप इन अटल सच्चाईयों को समझो, तत्ववेता महापुरुषों की संगत करो। जिनके अन्दर राग द्वैष का एक कण मात्र भी नहीं होता, उनकी संगत करो। गुरू ग्रन्थ साहिब जी की बाणी पर इमान लाओ। बाणी को सत्-सत् करके मानों, बाणी की कमाई करो। बाणी तत्ववेत्ता महापुरुषों की संगत करने के लिए बार-बार भेजती है - प्रभु प्यारों का महत्व बताती है। फ़रमान है कि -

साध की महिमा बेद न जानहि।
जेता सुनहि तेता बखिआनहि।
साध की उपमा तिहु गुण ते दूरि।
साध की उपमा रही भरपूरि।
साध की सोभा का नाही अंत।
साध की सोभा सदा बेअंत।
साध की सोभा ऊच ते ऊची।
साध की सोभा मूच ते मूची।
साध की सोभा साध बनि आई।
नानक साध प्रभ भेदु न भाई॥ अंग - 272

पर बड़े खेद की बात है, यह नाम व्यापार विरले ही करते हैं। बलिहार हूँ, उन पर जो नाम के व्यापारी हैं, आप तो भवसागर से तर जाते हैं, तथा संसार को भी पार उतारते हैं।

गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 22)

सिमरनु भजनु दइआ नही कीनी
तउ मुखि चोटा खाहिगा ॥ ***अंग - 1106***

शबद तो समझ लिया लेकिन न तो सिमरन-भजन किया और न ही दया की तो फिर क्या होगा?

धरम राइ जब लेखा मागै किआ मुखु लै कै जाहिगा॥
अंग - 1106

जब लेखा जोखा होगा तो फिर वहाँ जवाब क्या दोगे? वहाँ पर फिर तुम्हारे पास कुछ जवाब देने के लिए कुछ है? इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - जदों कूढ के वही लेखा मंगिआ,
फेर की जवाब देवेंगा।

नानकु आखै रे मना सुणीऐ सिख सही ॥
लेखा रबु मंगेसीआ बैठा कढि वही ॥
तलबा पउसनि आकीआ बाकी जिना रही ॥
अजराईलु फरेसता होसी आइ तई ॥
आवणु जाणु न सुझई भीड़ी गली फही ॥
कूड़ निखुटे नानका ओड़कि सचि रही ॥ अंग - 953

महापुरुषों से सुना कि फिर जवाब क्या दोगे?

धरम राइ जब लेखा मागै
किआ मुखु लै कै जाहिगा ॥ ***अंग - 1106***

फिर वहाँ पर क्या मुख लेकर जाओगे? फिर तो वहाँ पर शर्मिन्दा होना पड़ेगा -

कबीर लेखा देना सुहेला जउ दिल सूची होइ ॥
अंग - 1375

जिसके हृदय में सच्चाई है, छल कपट नहीं है, फिर तो लेखा देना सरल है, अन्यथा यह कठिन बहुत है। वहाँ तो एक-एक बात का हिसाब माँगा जाएगा -

लेखा लीजै तिल जिउ पीड़ी ॥ ***अंग - 1028***

जिस प्रकार से तिल की पेराई होती है, इस प्रकार से लेखा लिया जाता है, फिर वहाँ पर बहुत कठिनाई आ जाती है। लेखा देने से तो सारे ही डरते हैं। गुरू जी कहते हैं कि फिर लेखा कैसे दोगे? सन्त ईशर सिंह जी राड़ा साहिब वाले बताया करते थे कि एक मिजिस्ट्रट फैसला कर रहा था, उसने रिश्वत ले ली थी जिस कारण से वह निर्दोष व्यक्ति को सजा दे रहा था और दोषी को बरी कर रहा था। वह निर्दोष व्यक्ति भजन बन्दगी बहुत करने वाला था। उसे किसी महात्मा ने बता दिया था कि तुम इस प्रकार से भजन बन्दगी करते जाओ, वाहिगुरू जी स्वयं ही तुम्हारी मदद करेंगे।

महापुरुषों का तो वचन ही हुआ करता है। एक तो ऐसे होते हैं कि जब संकट में हैं, फिर तो याद करते हैं। यदि मैंने कह दिया कि 42 दिन पाठ कर लो, फिर वे 42वें दिन ही आ जाते हैं कि बस अब तो हमारा काम हो गया और वे उसी समय पाठ को छोड़ देते हैं। कई व्यक्ति कहेंगे कि जी इतने पाठ तो हो गए थे लेकिन इसके आगे तो अब होते ही नहीं हैं, ऐसा ही हमारा स्वभाव है। जब हम फँस जाते हैं तो उस समय तो हम करते हैं अन्यथा हम परमात्मा को कुछ नहीं समझते हैं। कहते हैं कि नाव समुद्र से बाहर निकली तो फिर अब ख्वाजा से क्या काम? कहने का तात्पर्य यह है कि यदि भजन बन्दगी की जाए तो हमारे सारे संकट दूर हो जाते हैं।

एक बार सन्त बाबा ईशर सिंह जी राड़ा साहिब वालों के पास कई प्रेमीजन आए और कहने लगे, हमारा एक रिश्तेदार कत्ल के मुकद्दमे में फँस गया है, आप कृपा करो। महाराज जी चुप कर गए कि इसमें हमने क्या करना है? वे कई बार आए और बहुत सारे लोगों को साथ में लाया करते थे। आखिर में सन्त जी कहने लगे, अच्छा हम उपाय बता देते हैं। ये सवेरे ही उठकर जपुजी साहिब के पाठ करने लग जाया करें और जिस समय तक रात को सोते हैं, उस समय तक करते रहा करें। प्रार्थना करते रहा करें, उस व्यक्ति के नमित्त जिसे इन्होंने मारा है, वह कच्ची कैद में था। आठ साल बीत गए, वह पाठ करता रहा। आठ साल बाद जिसे उसने मारा था, वह उसके सपने में आ गया और कहने लगे, बन्धु! मेरा तो भला हो गया है क्योंकि तुमने पाठ मेरे लिए बहुत किए हैं, इसी के फलस्वरूप अब मैंने तुमसे बदला नहीं लेना है, मैंने तुम्हें माफ कर दिया है। उधर उसकी फाइल निकल आई, पेशी हुई और पेशी में वह बरी हो गया। सारे महाराज जी के पास आ गए और सारी वार्ता महाराज जी को बताई।

पाठ करके बड़े से बड़े संकट भी टल जाया करते हैं। अतः वह प्रेमी पाठ किया करता था और प्रार्थना किया करता था कि हे प्रभु जी! मुझे पता चला है कि मैं निर्दोष फँस रहा हूँ और जो दोषी हैं, उन्हें बरी किया जा रहा है। यह अन्याय हो रहा है। निर्दोष को फँसाया तथा दोषियों को छोड़ा जा रहा है। सजा भी बहुत कड़ी दी जा रही है, सजाए-मौत दी जा रही है। इस परिस्थिति में तुम्हारे बिना मेरा कोई भी सहायक नहीं है।

अब प्रभु जी ने थोड़ा सा पर्दा उठा दिया क्योंकि वास्तव में तो वह सदैव हमारे साथ ही रहता है, यह बात अलग है कि हमें इस बात का पता ही नहीं चल पाता है कि दुनिया हमारे साथ क्या कर रही है? किस प्रकार की दुनिया है, उस दुनिया पर से प्रभु जी ने थोड़ा सा पर्दा हटा दिया। जब वह जज फैसला लिखने लगा तो वह क्या देखता है कि उसके सामने एक व्यक्ति खड़ा हुआ है। वह जज बोला, तुम कहाँ से आ गए? चिटकनी की तरफ जब उसने देखा तो चिटकनी तो लगी हुई है। वह बोला, मैंने कहाँ से आना था, मैं तो प्रत्येक समय तुम्हारे साथ ही रहता हूँ।

जज ने कहा, पहले तो तुम्हें कभी देखा नहीं? वह बोला, मैं तो तुम्हारे साथ ही होता हूँ लेकिन आज तुम्हें दिखाई दिया हूँ कि मैं भी तुम्हारे साथ ही हूँ।

जज ने कहा, तुम्हारा नाम?

वह बोला, मेरा नाम है चित्रगुप्त (गुप्त फोटोग्राफर) मैं तुम्हारे चरित्र की तस्वीरें खींचता रहता हूँ। तुम जो भी गलत कार्य करते हो मैं उन सबकी तस्वीरें लेता रहता हूँ और मेरे पास पूरी फिल्म बनी पड़ी है। मेरे लिए दीवारें वगैरह कोई अर्थ नहीं रखती हैं। मैं इस समय तुम्हें दिखाई पड़ रहा हूँ, अभी दिखने से हट जाऊँगा। वह दिखाई देना बन्द हो गया और कुछ समय बाद पुनः दिखाई देने लग पड़ा।

कहने लगा, तुम नाजायज रिश्वत लेकर निर्दोष व्यक्ति को फँसा रहे हो लेकिन उस व्यक्ति की बात परमात्मा की दरगाह में सुन ली गई है। इस नाजायज फैसले के फलस्वरूप तुम्हें नर्कों में जाना पड़ेगा और वहाँ पर तुम बहुत अधिक दुख पाओगे। तुमने आज तक सारे बुरे कार्य ही किए हैं, कोई अच्छा कार्य तो तुमने किया नहीं है, उसके हाथ में दो नोटबुकें थीं।

जज ने कहा, इन नोटबुकों में क्या है? उसने काली नोटबुक खोल कर दिखाई कि तुम अब तक साढ़े ग्यारह सौ पाप बड़े-बड़े कर चुके हो, इन सबका तुम्हें लेखा देना पड़ेगा और नर्कों में तुम्हें सड़ना पड़ेगा। वहाँ पर फिर तुम्हारी कोई भी सहायता नहीं करेगा -

ओथै हथु न अपड़ै कूक न सुणीअै पुकार ॥
ओथै सतिगुरु बेली होवै कढि लए अंती वार ॥
अंग - 1281

वहाँ पर फिर मार पड़ेगी और तुम्हारे द्वारा किए गए कर्मों का फल तो तुम्हें भोगना ही पड़ेगा तथा वहाँ पर तुम्हारी कोई भी मदद नहीं कर पाएगा -

धारना - जिंदे रोवेंगी ते रो-रो पछोतावेंगी,
फेर तेरा कोई ना बणे।

आपीनै भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ
॥ वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ ॥
अगै करणी कीरति वाचीअै बहि लेखा करि समझाइआ ॥
थाउ न होवी पउदीओ हुणि सुणीअै किआ रुआइआ
॥ मनि अंधै जनमु गवाइआ ॥ अंग - 464

तुम यही पर शाह बहादुर हो, यहीं पर अधिकारी हो लेकिन जब तुम्हें लेखा देना पड़ेगा तो फिर तो तुम्हें घसीट कर ले जाएँगे, फिर तुम रोओगे और पाश्चाताप करोगे लेकिन तुम्हारा मददगार कोई भी नहीं बनेगा। जिनके नाम पर तुम पाप करते हो वे भी तुम्हारी मदद नहीं कर पाएँगे -

बहु परपंच करि पर धनु लिआवै ॥
सुत दारा पहि आनि लुटावै ॥ 1 ॥
मन मेरे भूले कपटु न कीजै ॥
अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
छिनु छिनु तनु छीजै जरा जनावै ॥
तब तेरी एक कोई पानीओ न पावै ॥ अंग - 656

तुम्हें अपने कर्मों का लेखा तो देना ही पड़ेगा फिर तुम बहुत रोओगे। यदि कहो तो तुम्हें दिखला भी देते हैं। आँखें बन्द करो, तुम्हें, तुम्हारा ही हाल दिखा देते हैं कि तुम्हारे साथ क्या होगा? जैसे ही उसने आँखें बन्द करके उस दृश्य को देखा तो वह बहुत घबरा गया और एकदम से आँखें खोलकर बैठ गया। कहने लगा यह तो बहुत भयावह दृश्य है।

चित्रगुप्त बोला, हाँ ऐसे ही होगा।

जज ने कहा, मैंने कितने पाप किए हैं?

चित्रगुप्त ने कहा तुमने 1150 बड़े-बड़े पाप किए हैं। पढ़कर सुनाऊँ? उसने दो-चार पढ़कर सुनाए।

जज कहने लगा, ठीक है, मुझे विश्वास आ गया है लेकिन मुझे यह बताओ कि क्या मैं किसी तरीके से छूट भी सकता हूँ? क्योंकि यह तो मुझे पता लग गया है कि मुझे लेखा देना पड़ेगा और बहुत भारी सजाएँ मिलेंगी।

चित्रगुप्त ने कहा कि एक तो तरीका यही है कि तुमने

जो भी अवैध सम्पत्ति अर्जित की है वह सब गरीबों में बाँट दो और दूसरी बात यह है कि तुम किसी महात्मा की संगत करो तथा उनसे कर्मों को मिटाने वाला 'नाम' ले लो। उस नाम की फिर तुम कमाई करो, इस विधि से तुम्हारा लेखा जोखा समाप्त हो सकता है।

उस समय उस जज के मन में ख्याल आने लग पड़े कि मैं अपनी कोठी को बेच डालूँ और इसके अतिरिक्त जो गैर वाजिब धनोपार्जन द्वारा अन्य जायदाद खरीदी है, उसे भी बेच दूँ।

वह (चित्रगुप्त) उसी समय अपनी दूसरी नोटबुक में कुछ लिखने लग पड़ा।

जज ने कहा तुम यह क्या लिख रहे हो?

उसने कहा, इस समय तुम्हारे मन में शुभ ख्याल चल रहे हैं, मैं उन्हें नोट कर रहा हूँ। बुरे ख्यालों की गणना उन्हें अन्जाम देने के बाद की जाती है जबकि शुभ ख्यालों की गणना पहले ही हो जाती है। ऐसा कल्युग का समय होने के कारण है। दरअस्ल कल्युग के अन्दर प्रत्येक का मन अत्यन्त दूषित हो चुका है और बहुत मुश्किल से ही किसी के मन में सत्य की बात आ पाती है। चूँकि इस समय तुम्हारे मन में शुभ ख्याल आ रहे हैं, इसलिए मैं उन्हें नोट कर रहा हूँ। इतना कहने के बाद वह चित्रगुप्त बोला कि अब मैं जा रहा हूँ लेकिन तुम सही न्याय करना।

उसने अब सारी रिश्वतें वापिस कर दीं और जहाँ तक उसे याद था, उसने सभी के धन वापिस कर दिए और सबसे क्षमा याचनाएँ कीं तथा जायदाद बेचकर उसे गरीबों में बाँट दिया। उसने अब चोला पहन लिया तथा किसी पूर्ण साधू की तलाश में घर से चला गया। उसकी किस्मत अच्छी थी, फलस्वरूप उसे कोई पूर्ण साधू मिल गए। उन्होंने उसे कर्म, उपासना, ज्ञान और विज्ञान के चारों दर्जों में से आगे निकाल दिया।

सन्त बाबा (ईशर सिंह जी राड़ा साहिब) जी बताया करते थे कि वह बाद में बहुत उच्च कोटि का साधू हुआ।

अतः इस प्रकार से ये सारे लेखे देने पड़ते हैं। सधने के मन में इन सभी बातों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा -

धरम राइ जब लेखा मागै किआ मुखु लै कै जाहिगा॥
कहतु कबीरु सुनहु रे संतहु साधसंगति तरि जाँहिगा॥
अंग - 1106

इन सब बातों को सुनकर उसके मन में इतनी गहरी चोट लगी कि वह बेहोश हो गया और उसका टोकरा भी एक तरफ गिरा पड़ा है और वह स्वयं धरती पर बेहोश हुआ पड़ा है। जो चीलें आसमान में उड़ रही थी, वह माँस को उठा ले गईं। सन्त जी ने कहा, प्रेमीजनो! इधर कोई व्यक्ति चला आ रहा था लेकिन अब कहीं दिखाई नहीं पड़ रहा है? वह प्रेमी पुरुष बोले, सन्त जी! लगता है वह गिर गया है। जब उन्होंने पास में जाकर देखा तो पता चला कि वह व्यक्ति गिरा पड़ा है। अब उन्होंने उसके हाथ-पैरों की मालिश की, फलस्वरूप उसे होश आ गई। अब वह कहने लगा, महात्मा जी! मुझे माफ कर दीजिए, मेरा तो सारा जीवन ही माँस काटते और माँस बेचते ही बीत गया है, मैं तो जानवरों को ही काटता रहता हूँ। क्या मेरा भी किसी प्रकार से उद्धार हो सकता है?

उस समय महापुरुष अन्तर्ध्यान हो गए और देख लिया कि यह जीव कौन है? फिर महापुरुषों ने देखा कि यह तो पूर्वजन्म में बहुत अधिक भजन बन्दगी करने वाला था लेकिन उस समय इसका कोई ऐसा संस्कार रह गया जिसकी बदौलत उसे यह जन्म कसाई का मिल गया। अतः इसे तो अब चक्रव्यूह में से बाहर निकालना ही पड़ेगा। उस समय महापुरुषों ने उसे नाम की दात प्रदान कर दी और भजन बन्दगी करने की युक्ति समझा दी। उसी समय से उसने नाम का सिमरन करना शुरू कर दिया और अन्य सारे काम काज को छोड़कर केवल और केवल भजन-बन्दगी ही करने लगा। भजन कोई भी करने लग जाओ खाना तो स्वतः ही आ जाया करता है क्योंकि जो लोग भजन नहीं करते हैं उनके लिए खाना आ जाता है और फिर जो लोग भजन-बन्दगी करते हैं, उनके लिए तो भोजन आना ही है। थोड़ा सा भेष धारण कर लो धन भी आ जाएगा, भोजन भी आ जाएगा। यदि कोई सचमुच ही भजन करने लग पड़े फिर तो परमात्मा ने भोजन भेजना ही है -

काहे रे मन चितवहि उदमु
जा आहरि हरि जीउ परिआ ॥
सैल पथर महि जंत उपाए
ता का रिजकु आगै करि धरिआ ॥ ***अंग - 10***

उस समय उसने बहुत अधिक नाम सिमरन किया। वह दिन-रात नाम सिमरन करता रहता है। दरअस्ल कोई विरला ही इस प्रकार का दृढ़ पुरुष हुआ करता है कि जब उसे युक्ति मिल जाए तो वह निरन्तर लगा ही रहता है। वैसे तो ज्यादा लोग इस प्रकार के होते हैं कि पहले तो बहुत जोश में लग जाते हैं लेकिन कुछ समय बाद ही उनका जोश ठण्डा पड़ जाता है और धीरे-धीरे वे पुनः पूर्व स्थिति में ही पहुँच जाते हैं। आम आदमी का ऐसा स्वभाव ही हुआ करता है। लेकिन जो लोग वैराग्य भाव वाले होते हैं वे अलग प्रकार के और दृढ़ स्वभाव वाले होते हैं। वे तो दिन-रात आगे की तरफ ही

बढ़ते जाते हैं। इस प्रकार से समय अपनी गति से आगे बढ़ता रहा और सधना जी का सम्मान भी चहुँओर बढ़ने लग पड़ा। सत्संग के लिए लोग आने लग पड़े और धीरे-धीरे उसकी सुरति भी अनुभव मण्डल में पहुँच गई। जिस समय किसी साधक की वृत्ति अनुभव के मण्डल में पहुँच जाती है तो उस समय उसे तत्व ज्ञान स्वतः ही हो जाया करता है। फिर सारी पुस्तकों व सारे प्रकार के वचन स्वतः ही अन्दर से आने लग पड़ते हैं। उस समय वह सत्संग करता है और सब लोग उसे अत्यधिक सम्मान प्रदान करते हैं, संगत भी बहुत अधिक इक्ट्ठी होने लग पड़ी लेकिन उसके मन में एक ख्याल बराबर चलता रहता है कि ऐ मन! परमात्मा का मिलाप तो अभी हुआ नहीं है, मंजिल तो अभी प्राप्त ही नहीं हो पाई है? इस प्रकार से उसके मन दिन-रात वैराग्य भाव में ही रहता है। आज उसके मन में ख्याल आया कि मुझे जगन्नाथ के दर्शन करने चाहिए और वहीं पर बैठकर व टिककर भजन करना चाहिए। हो सकता है कृपावान परमात्मा मुझे दर्शन प्रदान कर ही दे, फलस्वरूप मेरा कल्याण हो जाए।

साधु संगत जी! धन्य था वह पुरुष जो कि इस प्रकार की निम्न कोटि की आजीविका में से निकल कर भजन बन्दगी करता है, नाम जपता है और मन के अन्दर प्रभु दर्शन की उम्मीद रखता है। वैसे ही तो नहीं वह श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर विराजमान हो गया है। उसने बहुत जबरदस्त कमाई की है। वह कमाई उसे इतनी ऊँचाई पर ले गई कि जितनी ऊँचाई पर साधुओं व सन्तजनों की मंजिल हुआ करती है।

आज उसके मन में जगन्नाथ जी के दर्शनों के बारे में ख्याल आता है और वह घर से दर्शनार्थ प्रस्थान कर जाता है। उसके मन के अन्दर अब अत्यधिक चाव है जिस कारण से उसके मन में इस प्रकार के भाव प्रकट हो रहे हैं -

धारना - हरि दरशन की आसा,
मेरे मन हरि दरशन की आसा।

पंथु निहारै कामनी लोचन भरी ले उसासा ॥
उर ना भीजै पगु न खिसै हरि दरसन की आसा ॥
उडहु न कागा कारे ॥
बेगि मिलीजै अपुने राम पिआरे ॥ ***अंग - 338***

अतः इस प्रकार से वैराग्य के शब्द पढ़ते हुए भजन गाते हुए वह चला जा रहा है और मंजिल बहुत थोड़ी सी रह गई है। जब अहमदाबाद के पास में जा पहुँचा तो आज कोई विघ्न पड़ गया और कोई पिछला कर्म जाग पड़ा या फिर आज किसी लेखे-जोखे का दिन आ गया। उस समय वह किसी एक गाँव में चला जाता है। वहाँ पर उसने एक अच्छा वृक्ष देखकर, उसके नीचे सफाई वगैरह करके अपना आसन बिछा लिया और वहाँ पर बैठ गया।

जिस वृक्ष के नीचे वह बैठा था उससे कुछ ही दूरी पर एक घर था और घर के अन्दर एक सुन्दर व युवा महिला रह रही थी। इधर सधना भी खूब हृष्ट-पुष्ट व सुन्दर शरीर वाला था तथा उसका शरीर भजन बन्दगी के कारण लाल सुर्ख रंग वाला व आकर्षक था। उसके नेत्रों में रस था वह अपने नेत्रों को ऊँचा नहीं करता था बल्कि नीचे की तरफ ही रखता था तथा प्रतिक्षण भजन-बन्दगी में ही लीन रहता था।

अब उस युवा महिला के मन में बुराइयाँ आने लग पड़ीं, उसने अपने घर से खाना तैयार करके उसे खिलाया तथा साथ में ही एक बहुत गलत बात भी कह दी। वह कहने लगी कि मैं देखो कितनी युवा व सुन्दर हूँ लेकिन मेरा पति तो बस ऐसा ही है। अच्छा हुआ तुम आ गए हो, मैं तुम्हारे साथ चलने के लिए तैयार हूँ, मुझे अपने साथ ले चलो, मैं आजीवन तुम्हारी सेवा करूँगी।

वह (सधना) कहने लगा, श्रीमती जी! आप मेरे ऊपर कृपा करो, मैं तो संसार की तरफ से उदास हो चुका हूँ और मेरे अन्दर अब कोई भी वासना नहीं है तथा मैं तो अध्यात्मिक पक्ष से घायल व्यक्ति हूँ। तुम्हारे मन में इस प्रकार के उल्टे ख्याल उत्पन्न ही क्यों हो गए? मुझे पता है कि इस प्रकार के कर्मों का फल क्या होता है? बड़ी मुश्किल से मैं परमात्मा की तरफ लगा हूँ और यह कुकर्म करके तो मेरे सारे ही कर्म भ्रष्ट हो जाएँगे।

विशिष्ठ जी कहते हैं कि हे राम जी! जो जिज्ञासु है, वह माया से बच सकता है लेकिन जो 'काम' है यह सभी कर्मों-धर्मों को नष्ट कर देता है। जिस प्रकार से इस्पात की तलवार देखने में बहुत सुन्दर लगती है लेकिन जब हम उसके साथ स्पर्श करते हैं, तेज तलवार की धार के साथ, तो उसी समय काट देती है। हे राम जी! स्त्री-भोग के साथ बँधा हुआ जीव मूढ़ अवस्था को प्राप्त हो जाता है और महाअन्ध अवस्था में फँस कर, आत्मानन्द के मण्डल को पूर्णतः भूल जाता है। उसका परमात्मा का ध्यान उसी प्रकार से ढक जाता है जैसे कि चन्द्रमा बादलों के द्वारा ढक जाता है। जो ज्ञान उसने बहुत ही मुश्किल से प्राप्त किया है, स्त्री के संग के द्वारा वह सारा का सारा नष्ट हो जाता है। तलवार देखने में तो बहुत सुन्दर होती है लेकिन जब स्पर्श करती है तो गला काट कर रख देती है।

अतः गुरू महाराज जी फुरमान करते हैं कि ऐ प्रेमीजनो! इस चीज से बचो और ऊपर निकलो। रहितनामे में आता है-

माँइ भैण जो आवै संगति,
दिशटि बुरी देखे तिस पंगति।

सत्संग में आई हुई महिला को बुरी दृष्टि से यदि कोई व्यक्ति देखता है तो गुरू जी कहते हैं कि -

सि्ख होइ जो करे करोध,
कंनिआ मूल न देवै सोध।

रहितनामे के अन्दर काम और क्रोध को बराबर ही कर दिया है। कहते हैं कि यदि कोई सिक्ख होकर क्रोध करता है -

धीअ भैण का पैसा खाइ,
गोबिंद सिंघ, धके यम लाइ।
परनारी, जूआ, असत, चोरी, मदिरा जान,
पाँच अैब ये जगत मो तजै सु सिंघ सुजान।
(भाई देसा सिंघ)

परनारी, जुआ खेलना, झूठ बोलना, चोरी करनी तथा शराब-सेवन करना इन पाँचों अवगुणों को जो सिंह छोड़ दे तो वही सिंह सुजान है। इस प्रकार से एक साखी भी आती है।

गुरू छठे महाराज जी का एक गुरसिक्ख था, जिसका नाम 'सन्त राम' था। छः फुट ऊँचा उसका कद था, बलिष्ठ कद काठी का वह सुन्दर नवयुवक था। राजा के महलों के आस-पास उसका पहरा लगता है। वह पहरे के दौरान अपनी ड्यूटी पर राज महल के बाहर सुरक्षा सड़क पर घूम रहा है और जहाँगीर की लड़की ने उसे, ऊपर खिड़की में से देख लिया और उसने अपने मन में यह धारण कर लिया कि मैं शादी केवल और केवल इसी के साथ करूँगी अन्यथा शादी ही नहीं करूँगी। उसने अपनी माँ को इस बारे में बतला दिया और माँ ने उसके पिता को बतला दिया। माँ-बाप ने अपनी शहजादी को बहुत समझाया लेकिन वह टस से मस नहीं हुई। इसके बाद उन्होंने सोचा कि चलो यह जवान अपनी फौज में है, हम इसे इस्लाम में ले आते हैं, कोई बात नहीं है, इसी के साथ इसका निकाह कर देंगे। गरीब है तो कोई बात नहीं है मैं, इसे या तो गवर्नर बना दूँगा या सूबेदार बना दूँगा। बहुत सारी जायदाद और जागीर इसके नाम लगवा दूँगा। यह अपने आप ही अमीर हो जाएगा। अतः हमें यह स्वीकार्य है।

बातचीत चल रही थी। उनका जो निकटवर्ती सेवादार या पहरेदार था उसने सन्त राम को बधाइयाँ दी कि भाई सन्त राम! तुम्हारी तो कल को बहुत तरक्की हो जानी है, तुमने तो सूबेदार बन जाना है और फिर तो तुमने हमें पूछना भी नहीं है। बहुत सारी जायदाद भी तुम्हें मिल जाएगी।

सन्त राम - क्यों क्या हुआ?

साथी पहरेदार ने कहा इस प्रकार से कल बातचीत चल रही थी।

सन्त राम बोला मेरा तो अपना धर्म है, मैं नहीं इस प्रकार की चीज में फँसने वाला हूँ। साथी पहरेदार बोला, तुम्हें इसमें क्या हर्ज है, शादी तो तुमने करवानी ही है इसमें क्या बुरा है, तुम जहाँगीर की लड़की के साथ करवा लो?

सन्त राम कहने लगा, यदि यह बात सच्ची है तो मैं इस देश में से निकल जाता हूँ। फलस्वरूप वह उसी समय वहाँ से चला गया। जिस समय जहाँगीर ने उसे बुलाया तो पता चला कि सन्त राम तो भगौड़ा हो गया है। राजा ने तलाश करने के हुक्म दे दिए और आखिर वह पेशावर के पास सीमा को पार करता हुआ पकड़ा गया। लाहौर लाकर उसे पुनः पूछा गया लेकिन वह किसी भी प्रकार से मानने के लिए राजी नहीं हुआ। इसके बाद बादशाह ने हुक्म जारी कर दिया कि इसका सिर काट कर और थाली में रखकर हमारे समक्ष पेश किया जाए ताकि शहजादी इसे देख ले। जल्लाद उसका सिर काट कर थाली में रखकर और रुमाल से ढककर ले आए। शहजादी को कहा गया कि सन्त राम का सिर यह पड़ा है। जब शहजादी उसके कटे हुए सिर को हाथ लगाने लगी तो वह सिर एकदम ऊँचा उठ गया। वह (कटा हुआ सिर) शहजादी के अपने कद से सवा बित्ता और ऊँचा उठ गया। दशम ग्रन्थ में लिखा है कि -

सवा गलिशठ सिर उठियो तब न कबूली नार।

उस कटे हुए सिर ने भी उस पर नारी को स्वीकार नहीं किया।

अतः साधु संगत जी! इस प्रकार के सुख के साधन घर में तभी होते हैं, जब आज्ञाकार पुत्र हो, मधुर भाषी स्त्री हो और पास में पर्याप्त धन हो। उस घर को स्वर्ग तुल्य घर कहा जाता है।

आगिआकारी पुतर होवे, अर मि्ठ बोलड़ी नार।
धन आपणा संतोख होवे, चार सवरग संसार।

ये संसार के चार स्वर्ग हैं और दूसरी तरफ -

कि्कर घर, कपूत घर, घर कलिहणी नार।
तिअ अगै चलणा चारो नरक संसार।

गुरू घर के अन्दर पर-स्त्री-गमन को बहुत अधिक बुरा माना गया है। इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - इह ताँ विहु दीआँ भरीआँ होईआँ गंदलाँ,
खंड 'च लबेड़ रखीआँ।

फरीदा ए विसु गंदला धरीआँ खंडु लिवाड़ि ॥

ईक राहेदे रहि गए ईक राधी गए उजाड़ि ॥

अंग - 1379

चाहे बुरा पुरुष है और चाहे बुरी स्त्री है, दोनों ही बुरे हैं। वैसे यह पराया आकर्षण भी व्यर्थ ही होता है। यदि आप दूर दृष्टि से देखो तो शरीर के अन्दर क्या है जिसे तुम सुन्दर शरीर कहते हो। चाहे वह मनुष्य का शरीर है और चाहे स्त्री का शरीर है। तुम अपने अन्दर बुरी वासनाओं को आने देते हो, वैसे इस शरीर में क्या है? इस बारे में गुरवाणी का फुरमान है -

बिसटा असत रकतु परेटे चाम ॥
इसु उपरि ले राखिओ गुमान ॥ अंग - 374

इसमें विष्टा है, माँस है, खून है, हजारों प्रकार की इसमें मैलें पड़ी हैं, यह तो त्वचा रूपी थोड़ा सा प्लास्टिक का सा ऊपर कपड़ा पड़ा हुआ है, उसके अन्दर ये चीजें हैं, अन्यथा इसे तो देख पाना भी मुश्किल था।

इस प्रकार सधने ने कहा, देखो श्रीमती जी! मैं तुम्हारे पैरों को हाथ लगाता हूँ, मुझे माफ करो। मैं तो कसाई था और न जाने कितने जानवर मैंने अपने हाथों से मारे हैं तथा बड़ी मुश्किल से मुझे यह मार्ग मिला है। पता नहीं कितने पाप मेरे सिर पर चढ़े हुए हैं, इसलिए तुम अब एक और पाप मेरे हाथों से न करवाओ। जाओ और जाकर अपना काम करो।

जाओ! खुश रहो! सन्तजनों को परेशान नहीं किया करते हैं। उस समय वह कुछ और समझ गई उसने सोचा यह मेरे पति से डर रहा है। उसका पति अन्दर सो रहा था। उसने एक लम्बी सी छुरी उठाई और अपने पति का सिर धड़ से अलग कर दिया तथा सिर को थाली में रखकर साधना जी के आगे रख दिया। कहने लगी, सन्त जी! लो अब तो मैंने तुम्हारा डर भी समाप्त कर दिया है। अब तो तुम मुझे अपने साथ जहाँ चाहो ले चलो।

उस समय सधना बोला, श्रीमती जी! यह तो तुमने बहुत ही बुरा कार्य कर दिया है। कहने लगी यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो फिर मैं छोड़ूंगी तो तुम्हें भी नहीं। उसी समय उसने शोर मचाना शुरू कर दिया कि मैं लुट गई, मैं मारी गई, इस साधू ने मेरे पति को मार डाला है। यह देखो मेरे पति का सिर, इसके पास पड़ा हुआ है।

सूर्योदय हो गया, पुलिस ने उसे बाँध लिया। अब उसे (सधना जी को) राजा के दरबार में पेश कर दिया गया। वह महिला रोती हुई जा रही है, उसने जाकर सारी बात राज दरबार में कह दी। फलस्वरूप राजा ने सधना को सजा दे दी कि जो किले का निर्माण हो रहा है, उसमें इसकी बलि दे दी जाए।

वैसे काफी लोगों को पहले से ही पता था कि एक नया-नया भगत पैदा हुआ है, जिसका नाम सधना है। यथा-

हरि का भगतु प्रगट नही छपै ॥ अंग - 265

काजी और ब्राह्मण दोनों उससे बहुत अधिक अप्रसन्न थे। दोनों को पता लग गया कि यही सधना है। कहने लगे ठीक है, इसे अब सजा दिलवाते हैं और जीते जी इसे दीवार में चिनवा देते हैं, यानि कि इसकी बलि दे देते हैं क्योंकि वह दीवार रहती नहीं थी।

उस समय सधने को कहने लगे लो भाई सधना! तुम्हारी सजा यही है कि तुम्हें जीवित को ही दीवार में चिन दिया जाए। राज मिस्त्री आ गए और आकर ईंटें लगाने लग पड़े। उस समय सधने ने परमात्मा का ध्यान किया कि हे प्रभु! तुम तो बहुत दयालु हो, माना कि मैं बहुत बड़ा पापी हूँ, मैं पहले कसाई का कार्य करता था लेकिन मुझे यह भी पता है कि तुम्हारे नाम के अन्दर बहुत शक्ति है -

गुर का सबदु काटै कोटि करम ॥ अंग - 1195

प्रभु जी! अब तो मैं तुम्हारा बन्दा बन गया हूँ। मेरे ऊपर कृपा करो क्योंकि तुम तो बुरे लोगों की भी रक्षा करते हो। आप इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - जिवें भेख धारीआँ नूं रखिआ,
इवें मेरी रख लजिआ।

निप कंनिआ के कारनै इकु भइआ भेखधारी ॥
कामारथी सुआरथी वा की पैज सवारी ॥

अंग - 858

हे प्रभु जी! एक लड़की के पीछे एक भेष को धारण करके, तेरा रूप बनाकर चला गया था और उसकी लाज तुमने रखी।

दरअस्ल एक लड़की विष्णु भगवान की भक्ति किया करती थी, भक्ति तो हमेशा प्यार सहित ही हुआ करती है, चाहे वह गुरू की करो या किसी देवते की करो। प्यार के बिना भक्ति नहीं हुआ करती है, इसका फल होता है - प्रेम भक्ति। वह लड़की भक्ति के अन्दर इतना अधिक लीन हुई कि उसने अपनी माता को कहा कि माता! मैंने शादी नहीं करवानी है, यदि मैं शादी करवाऊँगी भी तो विष्णु भगवान के साथ ही करवाऊंगी। उसने कहा, बेटी! कल्युग का समय है, पहले तो देवगण प्रकट हो जाया करते थे, लेकिन अब तो वे आते ही नहीं हैं क्योंकि लोगों के कर्म इतने मन्द प्रकार के हो गए हैं कि अब देवताओं के दर्शन नहीं होते हैं। अतः तुम्हारी यह बात तो असम्भव है।

लेकिन लड़की कहने लगी, माता! चाहे मैं कुंवारी सारी जिन्दगी भर ही क्यों न रहूँ लेकिन यदि मैं शादी करवाऊँगी तो विष्णु भगवान जी के साथ ही करवाऊँगी। वहाँ पर एक बढ़ईगिरि का कार्य करने वाला लड़का महलों में कार्य करता है। धीरे-धीरे उसे इस बात का पता चल गया। उसके मन में आया कि मैं किसी न किसी छल-कपट के द्वारा इसके साथ शादी करवा लूँ। मैं विष्णु बनकर इससे शादी करवा लूँ।

उसका एक टैक्निकल प्रवृत्ति का मित्र था। जब यह उसके पास गया तो उसने पूछा क्यों मित्र! तुम इतना चुप-चुप क्यों रहते हो?

कहने लगा मित्र! बात यह है कि राजा की लड़की ने यह प्रण किया है कि मैंने विष्णु भगवान के साथ ही शादी करवानी है और उपाय कोई बनता नहीं है। मैं चाहता हूँ कि उसके साथ मेरी शादी हो जाए। उसके मित्र ने कहा तुम फिक्र न करो तुम्हारा यह कार्य तो मैं कर दूँगा।

मेरे पास एक बनावटी गरुड़ है जो कि उड़ान भर लेता है, मैं उसको दो भुजाएँ और लगा दूँगा और फिर तो तुम पूरी तरह से ही विष्णु ही बन जाओगे। उसने इसी तरह से सारा यन्त्र बना कर उसे दे दिया और कहा कि अब तुम उसके महलों पर सीधा ही जाकर उतर जाओ। अब लड़की के महल पर सीधा ही जाकर उतर गया। लड़की ने जब ऊपर आकर देखा तो वह बहुत प्रसन्न हो गई कि विष्णु भगवान जी आ गए हैं। उसने कहा ऐ लड़की! मैं तुम्हारी भक्ति पर प्रसन्न होकर यहाँ आया हूँ, जाओ अपने माता-पिता को भी बुला लो। माता-पिता भी आ गए और उन्होंने आकर उन्हें नमस्कार की तथा हाथ जोड़कर खड़े हो गए। अब उस विष्णु भगवान (बनावटी) ने कहा राजन्! तुम्हारी लड़की के मन में यह भावना है कि इसने मेरे साथ शादी करवानी है। अतः मैं यहाँ आ गया हूँ लेकिन यहाँ पर मैं मनुष्य रूप में ही रहा करूँगा, देव रूप में मैं यहाँ नहीं रहा करूँगा। अब तो मैं वापिस जा रहा हूँ और कल सुबह को ही मैं पुनः मनुष्य रूप में आऊँगा। अब वह गरुड़ को उड़ाकर लौट गया तथा दूसरे दिन फिर लौट आया है और फिर उसकी शादी हो गई। समय अपनी चाल से चलता रहा। पड़ोस के राजा को पता चल गया कि एक बनावटी व्यक्ति ने विष्णु का रूप धारण करके राजा की लड़की से शादी करवा ली है तथा विष्णु भगवान को अपना दामाद जानकर राजा ने अपने यहाँ से फौजें हटा ली हैं। उसने सोचा क्यों न मैं अब इसका राजभाग ही छीन लूँ। उसने अपनी सेनाएँ लेकर इस पर आक्रमण कर दिया। इस राजा के वजीरों ने कहा, राजन्! फलाँ राजा ने अपनी सेना के द्वारा आक्रमण कर दिया है। वह कहने लगा, कोई बात नहीं है, विष्णु भगवान जी स्वयं रक्षा करेंगे। जब मेरा दामाद ही विष्णु है तो फिर अब हमें किस चीज की चिन्ता है? वे स्वयं ही हमारी रक्षा करेंगे।

वह राजा बिल्कुल शहर में प्रवेश करने वाला हो गया। वजीरों ने कहा, महाराज! वह तो शहर की ड्योढ़ी पर ही पहुँचने वाला है और कुछ ही देर में दरवाजा तोड़ कर अन्दर प्रवेश कर जाएगा।

राजा बोला, फिक्र मत करो, विष्णु जी तो अन्तर्यामी हैं, वे सब कुछ जानते हैं। उस समय वह जो लड़का (वनावटी विष्णु के रूप में) था उसने सोचा कि अब मैंने मरना तो है ही, क्यों न मैं स्वयं ही मर जाऊँ। उसने छत के साथ रस्सी बाँध लिया और जिस समय वह अपने गले में रस्सी डालने लगा तो उस समय विष्णु भगवान जी प्रकट हो गए। विष्णु जी कहने लगे, तुम अब क्यों मरने लगे हो? तुम तो मर जाओगे लेकिन बदनामी तो मेरी होगी। जाओ! मैं तुम्हें शक्ति प्रदान करता हूँ, तुम गरुड़ पर बैठकर जाओ और युद्ध करो जीत तुम्हारी ही होगी। इतना कहकर विष्णु भगवान जी गायब हो गए।

राजा ने कहा, महाराज जी! अब तो वे दीवारें ही तोड़ने लग पड़े हैं। अब गरुड़ में शस्त्र तो उसे दिए ही हुए थे। जिधर भी वह जाता है, सेनाएँ भागने लग पड़ती हैं। दूसरे राजा ने कहा कि यह तो सचमुच ही विष्णु जी आ गए हैं।

सधना कहने लगा, प्रभु जी तुम तो इतने दयावान हो कि एक भेषधारी की भी तुमने लाज रख ली और फिर मैं तो तुम्हारा भक्त हूँ। जब दीवार में चिने जाने के कारण मेरी मृत्यु ही हो गई तो फिर क्या लाभ होगा?

आवाज आई सधना! ये सब तो तुम्हारे कर्म हैं, किसी अन्य को दोष मत दो, इनको तो तुम्हें भोगना ही पड़ेगा।

धारना - पिआरे दोश ना किसे नूं देवीं,
दोश तेरे करमाँ दा।

ददै दोसु न देउ किसै दोसु करंमा आपणिआ ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥
अंग - 433

हे प्रभु जी! ऐसा कौन सा कर्म है?

प्रभु जी ने कहा तुम्हें दिखला देते हैं, प्रभु जी ने उसकी दिव्य दृष्टि खोल दी।

क्या देखता है कि पिछले जन्म के अन्दर मोनी सन्त था, बिल्कुल भी बोलता नहीं था। यह तपस्या कर रहा है और उधर एक कसाई गाय को लेकर जा रहा है। गाय उसके हाथ से छूट कर आई और इसके तप स्थान के पीछे आकर

गड्ढों में छिप गई। कसाई ने पूछा, भक्त जी! इधर कोई गाय आई है? इसने उसके हाथ में बड़ी सारी छुरी देख ली कि यह उसे मारेगा। उस समय इसने बिना कोई विचार किए ही अपने दोनों हाथ पीछे की तरफ कर दिए कि इधर गई है। अब चूँकि उसने मौन व्रत रखा हुआ था, इसलिए उसने बोलना तो था ही नहीं। अब कसाई ने गाय को पकड़ कर वहीं पर मार डाला। उधर पीछे से शेर आ गया, शेर ने उस कसाई को मार दिया। अब कसाई भी मरा पड़ा है और गाय भी मरी पड़ी है और ऊपर की तरफ महापुरुषों का आश्रम था। वहाँ पर साधू स्नान किया करते थे, वहाँ पर एक कुण्ड भरा पड़ा था। यह कुण्ड गंगा के तट पर था, जब बरसात हुई तो गंगा का पानी ऊपर की तरफ उछला और उस कुण्ड का जल भी उस जल में मिल गया, जहाँ पर यह कसाई और मृत गाय पड़ी थी, उनके ऊपर से वह पानी निकल गया। सन्तजनों की धूल और उनके द्वारा किए गए स्नान के पानी का फल यह हुआ कि दोनों को ही मनुष्य योनि प्राप्त हो गई। कहने लगे, देखो सधना! जो यह औरत तुम्हारे पीछे पड़ी हुई थी, यह वही गाय है और वह जो कसाई था, यह इसका पति है और जो वह साधू था, वह तुम हो। उस कर्म ने तुम तीनों को एक जगह पर इकट्ठा कर दिया। वह कर्म अब अपने action में आ गया, इसलिए अब तो उसे भोगना ही पड़ेगा। इस कर्म के फलस्वरूप ही तुम्हें दीवार में चिना जा रहा है।

सधना कहने लगा, हे प्रभु जी! यदि कोई व्यक्ति शेर की शरण में चला जाए लेकिन गीदड़ आ-आकर उसे डराते रहें तो फिर तो यह बात ठीक नहीं है न?

तव गुन कहा जगत गुरा जउ करमु न नासै ॥
सिंघ सरन कत जाईऐ जउ जंबुकु ग्रासै ॥

अंग - 858

फिर तुम्हारी शरण में आने का लाभ क्या हुआ जबकि तुम्हारी शरण में आने के बाद भी गीदड़ों से ही डरते रहना पड़े? यानि कि यदि तुम्हारी शरण में आने के बाद भी कर्म बन्धन में ही उलझे रहना पड़े? इसके बाद फिर आवाज नहीं आई।

दूसरी तरफ जो ईटों की नींव थी, वह सधना जी के घुटनों तक पहुँच चुकी थी। वह विनतियां कर रहा है। आवाज आती है सधना! कुछ हौंसला रखो। कोई बात नहीं सब ठीक हो जाएगा।

इसके बाद कहने लगा, महाराज जी! मेरे तो प्राण निकलने वाले हो चुके हैं और आप कह रहे हो कि सब ठीक हो जाएगा। मेरी कमर तक दीवार आ चुकी है दो-चार और ईंटें लगने के बाद मेरा पेट दब जाएगा फिर मैं श्वास कैसे ले पाऊँगा। इसके बाद हौंसला क्या करेगा? और आपकी कृपा का भी फिर क्या लाभ होगा? जब एक बूँद जल के कारण तड़पते हुए बाबीहा मर ही गया तो फिर उसके बाद चाहे उसके लिए एक समुद्र ही क्यों न उपलब्ध करवा दो, वह किस काम आएगा?

धारना - प्राण गिआँ 'ते सागर मिल जाए,
फेर किहड़े कंम आवणा।

एक बूंद जल कारने चात्रिकु दुखु पावै ॥
प्रान गए सागरु मिलै फुनि कामि न आवै ॥

अंग - 858

इतने में ईंटें और भी लग गईं, अब वह इस प्रकार से अनुनय-विनय कर रहा है -

धारना - कहु काहि चढावउ जी,
बूडि मूए नउका मिलै।

प्रान जु थाके थिरु नही कैसे बिरमावउ ॥
बूडि मूए नउका मिलै कहु काहि चढावउ ॥

अंग - 858

हे प्रभु जी! अब मेरे प्राण तो निकलने ही वाले हैं और आप कह रहे हो कि मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। जब जल में डूब कर ही मर गया तो फिर बाद में नाव लेकर घूमने का क्या लाभ?

आवाज आई सधना! यह तो तुम उलाहने देने वाली बातें करने लग पड़े हो, यह भक्तों वाली बातें तो हैं नहीं। उस समय उसे समझ आई। कहने लगा, हे प्रभु जी! मुझसे तो बहुत बड़ी गलती हो गई है, आप कृपा करो, अब तो मैं तुम्हारा ही हूँ, तुम अपना जानकर ही मेरी रक्षा कर लो -

धारना - वाहिगुरु! अउसरु मेरी रखि लीजिआ,
पिआरे मैं सधना जन तेरा।

मै नाही कछु हउ नही किछु आहि न मोरा ॥
अउसर लजा राखि लेहु सधना जनु तोरा ॥

अंग - 858

जब उसने विनम्रतापूर्वक विनती की तो क्या देखता है कि सामने बहुत बड़ा प्रकाश हुआ और किसी अलौकिक शक्ति ने उस दीवार को, जो कि राज मिस्त्रियों द्वारा बनाई जा रही थी, तोड़ कर बिखेर दिया और जो ईष्यालुजन वहाँ पर खड़े थे, वे सब उस दीवार के मलवे के द्वारा चोट लगने के कारण परलोक गमन कर गए।

(शेष पृष्ठ 22 पर)

बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 22)

सन्त महाराज जी ने सभी जिज्ञासुओं से कहा, प्रेमियो! माया बहुत मोहिनी है जैसा कि फ़रमान है -

माइआ ऐसी मोहनी भाई। जेते जीअ तेते डहकाई॥
अंग - 1160

सो आपजी ने इस चौथी प्रकार की माया का विस्तार पूर्वक वर्णन किया। सारा संसार अपने स्वरूप को भूला हुआ अपने आपको साढ़े तीन हाथ की देह मानता है। यह ज्योति स्वरूप है। महाराज जी कहते हैं -

मुंढहु भुली नानका फिरि फिरि जनमि मुईआसु।
कसतूरी कै भोलड़ै गंदे डुंमि पईआसु॥ अंग - 89

माया के वश में हुआ जीव इस शरीर में आत्म रूपी अमृत को भूल कर विषय विकारों में भटकता फिरता है। जैसे हिरण के मस्तक में कस्तूरी होती है पर वह वासना को ढूँढ़ने के लिए झाड़ियों में मुँह मारता फिरता रहता है। आत्म वस्तु को छोड़कर अस्थिर रहने वाले मायिक संसार में घुल मिल जाता है, विष इकट्ठी करता है, विष खाता है, पर किसी बिरले मनुष्य को ज्ञान होता है -

घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है
मनमुखा सादु न पाइआ।
जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै भ्रमदा भरमि भुलाइआ।
अंम्रितु तजि बिखु संग्रहै करतै आपि खुआइआ।
गुरमुखि विरले सोझी पई तिना अंदरि ब्रहमु दिखाइआ।
तनु मनु सीतलु होइआ रसना हरि सादु आइआ।
सबदे ही नाउ ऊपजै सबदे मेलि मिलाइआ।
बिनु सबदै सभु जगु बउराना बिरथा जनमु गवाइआ।
अंम्रितु एको सबदु है नानक गुरमुखि पाइआ॥
अंग - 644

सन्त महाराज जी ने फ़रमान किया कि प्यारे! माया के प्रभावाधीन यह जीव पूरी तरह से भूल जाया करता है जैसे कि महापुरुषों से एक कथा में सुनते हैं कि एक बार एक गडरिया रेवड़ लेकर जंगल में से निकल रहा था। वहाँ एक दो दिन का शेर का बच्चा दिखाई दिया। उसने उसे (शेर के बच्चे को) उठा लिया और भेड़ों का दूध पिला पिला कर बड़ा कर लिया। वह भेड़ों के साथ रहने लग गया। अपनी बोली भूल गया, अपने आपको भूल गया और एक डरपोक जीव भेड़ रूप अपने आपको समझने लग गया। एक बार उस जंगल में से एक शेर गर्ज़ता हुआ भेड़ों की तरफ आया, सारी भेड़ें डर के मारे भाग गई। शेर का बच्चा भी उनके साथ दौड़ता दौड़ता एक तालाब के पास पहुँच गया। उसने पानी में अपना मुँह देखा तो क्या देखता है कि मेरा मुँह तो उस शेर के मुँह से मिलता है जिसके भय से यह भेड़ें भाग कर आ गई हैं। इस शेर ने इसे आकर बताया कि तू भेड़ नहीं है, तू मेरे साथ आकर गर्जना कर। उसने उसे गर्ज़ना बताया और उसे बताया कि ये भेड़ें तो तेरी खुराक हैं, हमें अकाल पुरुष ने बहुत ताकतवर बनाया है। जब उसने शेर के साथ गर्जन की तो उसे निश्चय हो गया कि मैं भेड़ नहीं हूँ, शेर हूँ। इस प्रकार महापुरुष कहने लगे कि तुम्हारे साथ भी ऐसा ही हुआ है। तुम माया में भूले हुए अपने आपको पाँच तत्वों की बनी हुई नाशवान साढ़े तीन हाथ की देह समझकर काले, गोरे, अमीर, गरीब, हिन्दू, तुरक, ऊँच नीच की उपाधि, बेफज़ूल में धारण किये हुए हो। पाँच तत्व का शरीर तुम नहीं हो, यह तो तुम्हारी सांसारिक कार्य करने के लिए एक मशीन है। तुम्हें यह भ्रम हो गया है कि मैं जीव हूँ, इससे भी नीचे गिरकर, दृढ़ निश्चय के साथ, तुमने यह मान लिया कि मैं शरीर हूँ, मैं हिन्दू हूँ, मैं सिख हूँ, मैं पुण्य करता हूँ, मैं पापी हूँ, यह भ्रम उस समय तक दूर नहीं होता जब तक समरथ गुरू इस जीव को साधना सम्पन्न करवा कर, इसे गुरू शब्द द्वारा इसके स्वरूप का निश्चय नहीं करवाता। यह भ्रम गुरू की कृपा के बिना दूर नहीं हुआ करता। महापुरुष यह कहते हैं कि अपने असली स्वरूप को पहचान, तू जीव नहीं हैं। तू स्वंय ही ब्रह्म है, जीव भाव माया के प्रभाव के कारण तुझे प्रतीत हो रहा है। तू जीव भाव छोड़कर ऐसा निश्चय कर कि मैं ब्रह्म हूँ, मैं ब्रह्म हूँ, मैं ब्रह्म हूँ, मैं शरीर नहीं हूँ, मैं जीव नहीं हूँ, यह जीव भाव मैं अज्ञान के

कारण मानता था।

एक महात्मा ने विचार सागर में फ़रमान किया है -

करम उपासन कीने भारी। और अधिक जग फासी डारी।
आप उपाय कहो गुरदेवा। होवै जाते भवदुख छेवा।
पुन चाहत हम परमानंदा। ताको कहो उपाय सुछंदा।
श्री गुरू वाच॥
परमानंद मिलाप तूं जो शिश चहें सुजान।
जनमादिक दुख नाश पुन भ्रांति जनय तहि मान।
परमानंद सरूप तूं नह तोमें दुख लेश।
अज अबिनाशी ब्रहम चित जिन आने हीए कलेश॥
विचार सागर

महापुरुष कहते हैं कि हे शिष्य! तुझे जो परम आनन्द की प्राप्ति तथा दुख निवारण की इच्छा है, वह केवल भ्रम के कारण ही है। तू अपने स्वरूप को पूरी तरह से भूल चुका है। तू यह नहीं जानता कि तू स्वंय ही परम आनन्द स्वरूप हैं। तुझ में तीनों कालों में कहीं दुख है ही नहीं जैसा कि गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु।
अंग - 441

तुझे अपने आपका ज्ञान पूरी तरह से भूल चुका है -

जैसे कुरंक नही पाइओ भेदु। तनि सुगंध ढूढै प्रदेसु।
अपतन का जो करे बीचारु। तिसु नही जम कंकरु
करे खुआरु॥ *अंग - 1196*

इस प्रकार राड़ा साहिब ढक्की में घोर तपस्या शुरू हुई तथा 18 के करीब प्रेमी 6 वर्ष तक मौन व्रत धारण करके आत्म चिन्तन करते रहे तथा समय समय पर सन्त महाराज जी सभी को इकट्ठा कर लेते थे और अति ज्ञान पूर्ण वचन किया करते थे जैसा कि फ़रमान है -

सो प्रभु दूरि नाही, प्रभु तूं है।
सभु जगु देखिआ माइआ छाइआ।
नानक गुरमति नामु धिआइआ॥ *अंग - 354*

सन्त महाराज जी ने फरमाया कि देखो प्रेमियो! यह माया शेष सभी माया से भी प्रबल है। वे माया के रूप भी इसी में शामिल हो जाया करते हैं।

राजा जनक जी को एक बार एक भयानक सपना आने पर भारत वर्ष के सारे ऋषियों, मुनियों, विद्वानों को मिथिलापुरी में इकट्ठा कर लिया और प्रश्न किया कि ''यह सच्चा कि वह सच्चा?'' उस समय सारे भारत वर्ष के बड़े ऋषि, मुनि मिथिलापुरी में आए पर कोई भी इसका सही उत्तर न दे सका। इस प्रकार आठ वर्ष बीत गए। यह बात सुनकर एक अष्टावक्र नाम का बाल योगी, जिसका पिता राजा जनक के यहाँ आठ साल से रुका हुआ था, को पता चला। अपनी माँ से आज्ञा लेकर पालकी में बैठकर मिथिलापुरी पहुँचा। जब वह चलता था उसके शरीर में आठ बल पड़ते थे जिसके फलस्वरूप इसका नाम अष्टावक्र पड़ गया। लोग उसके शरीर में पड़ने वाले बलों के कारण ही उसे अष्टावक्र कहते थे। अष्टावक्र ने राजा जनक को सन्देशा भिजवा दिया कि मैं तेरे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए मिथिलापुरी में तुझे मिलना चाहता हूँ। राजा जनक ने दूसरे दिन दरबार बुलाया और अपने प्रश्न का, ''यह सच है या वह सच है'' का उत्तर लेने के लिए इस बाल ऋषि को बड़े आदर के साथ निमंत्रण दिया। यह प्रश्न एक ऐसा सपना आने के कारण, राजा जनक के मन में बेचैनी पैदा कर रहा था, पूरी वार्ता इस प्रकार है-

मिथिलापुरी में 12 बजे दिन के, जेठ का महीना जब गर्मी बहुत थी। बहुत गर्म हवा चल रही थी। गर्मी दूर करने के लिए अपने रंग महल को विभिन्न तरीकों से ठण्डा कर रहा था। हर दरवाज़े तथा खिड़की पर रवस लगाई हुई थी। उन पर गुलाब छिड़का जाता था तथा और अनेक प्रकार की सुगन्धित इत्र आदि के फुव्वारे लगे हुए थे। राजा जनक फूलों से सुसज्जित स्वर्ण पलंग पर आराम कर रहा था तथा महारानियाँ चन्दन आदि लगाकर गर्मी से अपने शरीर का बचाव कर रही थी। पलंग पर लेटे हुए राजा जनक की आँख लग गई और एक अदभुत सपना देखा जो पिछले किसी जन्म में इसके साथ बीता हुआ था। पिछले जन्मों के संस्कार कई सपनों की स्मृति में आ जाते हैं। बड़ी बड़ी कोठियों में रहने वालों को सपने आया करते हैं कि वे गन्दी बस्तियों, टूटे फूटे घरों में रह रहे हैं। दुख सुख भी प्रत्यक्ष रूप में देख लिया करते हैं। इसी प्रकार राजा जनक ने सपने में देखा कि उससे कोई बहुत बड़ा पाप हो गया है प्रजा उस पाप के बदले में उससे घृणा कर रही है और राजगद्दी से उतारना चाहती है। इस विचार को ध्यान में रखते हुए सारी प्रजा पड़ौसी राजा के पास गई और कहा कि हमें इस पापी राजा से स्वतन्त्र करवाओ। उसने प्रजा की बात सुन कर उस पर आक्रमण कर दिया बहुत भंयकर युद्ध हुआ। राजा जनक की सारी रानियों को उसने अपने कब्ज़े में कर लिया और राजा जनक को अकेले को ही एक वस्त्र देकर कड़ाके की धूप में, नंगे पैर देश निकाला दे दिया और हुक्म दे दिया कि कोई भी

व्यक्ति यदि इस राजा की अन्न, जल, वस्त्र, जूती आदि से सहायता करेगा तथा इसे प्यार से बुलाएगा, उसे सख्त सजा दी जायेगी। जो इसे धक्के मारेगा, जूतियाँ मारेगा उसे इनाम दिया जायेगा। इस प्रकार का ढिंढोरा सारी रियासत में पिटवा दिया। सभी उसका तिरस्कार करते हैं, धिक्कार है, धिक्कार है, कहते हैं। ईंट पत्थर मारते हैं। वह आराम देह महलों में रहने वाला राजा रोटी की मांग करता, भूखा प्यासा चला जा रहा है। लोगों ने हमदर्दी तो क्या करनी थी बल्कि उसका निरादर ही कर रहे थे। कोई उस पर तरस नहीं खाता। सिपाहियों का व्यवहार भी बड़ा कठोर था तथा धक्के मारकर उसे बाहर निकाल रहे थे। राजा गर्मी से तपित भूख प्यास का सताया हुआ बेहोश होकर गिर गया। सिपाही उसे छोड़कर चले गए। राजा जनक को जब होश आई तो क्या देखता है कि मैं तो एक बहुत भयानक जंगल में पड़ा हुआ हूँ। वह जंगली जानवरों से बचने के लिए अन्धेरी रात में कंकरों, पत्थरों से ठोकरें खाता हुआ एक वृक्ष पर चढ़ गया और मौत के भय से उसे नींद न आई। दूसरे दिन चला तो वह एक नगर की ओर जा रहा था वहाँ कुत्ते पीछे लग गये तथा कुत्तों ने बुरी तरह घायल कर दिया। पर क्या मज़ाल कि किसी भी व्यक्ति ने उसे छुड़वाया हो, इसके विपरीत गाँव के लड़के पागल पागल कहकर ईंट पत्थर मारते हैं। सिपाहियों ने फिर पकड़ लिया फिर गर्म गर्म रेत में ले जा रहे हैं। पहले ही भूख प्यास से बहुत व्याकुल था और भगवान को कहने लगा कि मैंने ऐसा कौन सा पाप किया है जिसके बदले में मेरी यह दुर्दशा हो रही है। याद करता है कि मेरी रानियाँ जो मुझे हर समय याद करती रहती थीं वे मुझे किस प्रकार दुष्ट दुष्ट कह कर सम्बोधन करती थीं और खूब ज़ोर ज़ोर से रोता है, चिल्लाता है, भगवान के सामने प्रार्थना करता है, धक्के खाता हुआ चला जा रहा है।

एक तीर्थ यात्रा पर जाने वाला इकट्ठ उसे रास्ते में मिला, राजा ने उनसे खाने के लिए मांगा। उन यात्रियों ने दान के रूप में राजा को एक एक कौड़ी दी। 19 कौड़ियाँ मिली। राजा हाथ में कौड़ियाँ लेकर गला फाड़ फाड़ कर रो रहा है और कह रहा है कि तेरी लीला कैसी है, मेरे पास तो हीरे जवाहारातों के खजाने भरे पड़े थे क्या मैं वही हूँ? हे प्रभु! तेरे कोप के कारण आज मेरे पास एक भी पैसा न रहा जिससे मैं चने लेकर ही खा सकूँ। 19 कौड़ियाँ लेकर दूसरे राजा के राज्य में किसी शहर में चला जा रहा है अकेले अकेले से पूछ रहा है कि मैं बहुत भूखा हूँ, कहीं सदा व्रत हो तो मुझे बता देना। दूसरे राजा के राज्य में इस पर दया करके एक सज्जन ने बताया कि वहाँ कुछ दूरी पर सदा व्रत चल रहा है। वहाँ जाकर लाईन में खड़ा हो जा। जब इसकी बारी आई बाँटने वाले ने कहा कि भाई! यहाँ तो खिचड़ी बाँटी जा रही है, तेरे पास बर्तन तो है नहीं। कोई बर्तन लेकर आ क्योंकि खिचड़ी बहुत गर्म है। राजा एक कुम्हार के पास जाकर 19 कौड़ियों के बदले में एक मिट्टी का कसौरा ले आया। भीड़ बहुत बढ़ गई यह लाईन में खड़ा हो गया, राजा कसौरा लेकर दोबार पहुँचा और खिचड़ी बाँटने वाले को कहा कि आपने मुझे बर्तन लाने को कहा था, मैं बर्तन ले आया हूँ, भूख से मैं बहुत व्याकुल हो रहा हूँ, कृपा करके मुझे थोड़ी सी खिचड़ी दे दो। उसने कहा कि प्यारे! खिचड़ी तो खत्म हो गई है, उसने खुरचन इकट्ठी करके इसके कसौरे में डाल दी और कहा कि सामने से आधा तोला घी ले ले। वहाँ भी बहुत भीड़ जमा थी। राजा का शरीर भूख से काँप रहा था, वह बहुत कमज़ोर हो गया था। मिट्टी वाला कसौरा हाथ में भी हिलता जाता था, बांटने वाले ने जल्दी जल्दी घी डाला पर वह धरती पर ही गिर गया। बार बार कहने पर उसने दया करके फिर घी डाल दिया। राजा जनक रोने लग पड़ा कि मैं दो तीन दिन पहले कितना बड़ा राजा था और आज मेरी यह हालत हो गई कि मैं भिखारियों से भी बुरा हो गया। मेरे पास तो कोई वस्त्र ही नहीं, मुझे तो मांगने का ढंग भी नहीं आता। हे प्रभु! यह क्या हो गया? अच्छा, तेरी बड़ी कृपा है कि मुझे खिचड़ी के दर्शन तो हो गए। यदि न मिलती तो मैंने भूख से मर जाना था। हे प्रभु! मैं यह भी नहीं जानता कि खिचड़ी खाना मेरे भाग्य में है भी या नहीं क्योंकि तेरी लीला अपंरपार है, क्या पता एक पल भर में विधाता क्या से क्या बना दे? क्या देखता है कि दो मस्त सांड आपस में भिड़ (लड़) रहे हैं। लोग उन्हें हटा रहे हैं वह लड़ते लड़ते वहीं पर पहुँच गए जहाँ यह अभी खिचड़ी की बुरकी (ग्रास) मुँह में डालने ही लगा था, तभी एक सांड से इसकी टक्कर हो गई, इसका कसौरा भी फूट गया और हाथ में जो ग्रास था वह भी गिर गया। झटका लगा, इसे होश आई, क्या देखता है कि एक बुरा दृश्य जो इसने सपने में देखा था वह दूर हो गया और अपने आपको ठण्डे महलों में पलंग पर पड़ा हुआ अनुभव कर रहा है। राजा को जागा हुआ देखकर, सेवकों ने जय बुलाई, पंखे वाले पंखा झुलाने लग गये चँवर करने वाले चँवर झुलाने लग गये पर राजा को कुछ भी अच्छा न लगा। बार बार सपने की स्मृति उसे याद आ रही है और सपने वाली पूरी अवस्था पूरी तरह प्रत्यक्ष दिखाई दे रही थी। शीतल महल उसे अच्छे नहीं लगते। वह यह समझ ही नहीं पा रहा कि जो कुछ मैंने देखा था वह सपना है या जो मैं सोने के पलंगों पर लेटा आराम

कर रहा हूँ यह सपना है? दिमाग चकरा रहा है। पूरी तरह से प्रभावित हो गया सपने से। जहाँ जहाँ ईंट पत्थर खाये हैं उसे वही दृश्य सपने वाले सामने आते हैं प्रत्यक्ष रूप में। राजा जनक की हालत पागलों जैसी हो गई, दिल हिल गया, दिमाग काम नहीं करता। किसी के समझाने पर भी उसको समझ नहीं आ रहा। घोड़े पर चढ़कर सपने वाले स्थानों को देखने चला जाता है। देखे जा रहा है कि मैं यहाँ बैठा था, ईंट पत्थर जो उसे मारे गये थे वे सभी वहीं पड़े हुए हैं। यहाँ कौडियाँ मिली थीं, यहाँ खिचड़ी मिली थी, यहाँ साँड के साथ मैं टकराया था। अब उसे यह पता नहीं चलता कि वह जाग्रत है या राज की हालत जाग्रत है। 'यह सपना है कि वह सपना है' इस प्रश्न का समाधान करवाने के लिए उसने सारे भारत वर्ष के ऋषि मुनि बुलाकर प्रश्न के हल के लिए प्रार्थना की पर प्रश्न ऐसा था कि किसी की

(पृष्ठ 18 का शेष)

उस समय जो वह महिला थी, जिसने अपने पति के कत्ल के दोष में सधने को फँसाया था, दौड़ी हुई आ रही है कि इसे मारो मत, मारो मत, मैंने ही अपने पति को मारा है। इस प्रकार सधना की लाज वाहिगुरू जी ने रख ली क्योंकि-

हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ
पैज रखदा आइआ राम राजे ॥ ***अंग - 451***

धारना - हरि जी छ्ड के सिंघाशन आउंदे,
बंने होए सूचे पिआर दे।

अपुने सेवक की आपे राखै आपे नामु जपावै ॥
जह जह काज किरति सेवक की तहा तहा उठि धावै॥
अंग - 403

राजा भी आकर भक्त जी के चरणों पर ढह पड़ा कि महात्मा जी! मुझसे भी बहुत बड़ी गलती हो गई है जो कि मैंने निर्दोष को सजा देने का हुक्म जारी कर दिया। अब मैं इस दोषी औरत को कुत्तों से फड़वाऊंगा।

सधना जी कहने लगे, राजन्! इसका कोई दोष नहीं है, यह तो कर्म बन्धन का ही चक्र है, जिस कारण से, इसने ऐसा किया। अतः इसे कुछ भी न कहा जाए, मुझे इसके साथ कोई भी राग या द्वैष नहीं है।

इस प्रकार से एक कसाई ने कितनी बड़ी भक्ति की जिस कारण से आप (सधना जी) श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर गुरू रूप होकर विराजमान हो गए हैं। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर आपका एक ही शबद है और जो भी श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर विराजमान हैं, वह हमारे गुरू स्वरूप ही हैं।

अतः किस निम्नावस्था से उठकर आप किस उच्चावस्था पर जा पहुँचे। यह सब नाम सिमरन की शक्ति है। गुरू जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! तुम भी नाम जप लो क्योंकि अभी समय है, काल का कोई पता नहीं हुआ करता है कि वह किसी समय आकर झपट्टा मार दे और कहीं यह मनुष्य जन्म यूँ ही न निकल जाए। इसीलिए गुरू जी हमें बार-बार इस प्रकार से ताकीद करते हैं, पढ़ो प्यार से -

धारना - वेखीं वारी ना गवाँ लईं,
तेरा जनम अमोल।

इस प्रकार से ध्यान रखो कि यदि सधना कसाई पार हो सकता है तो फिर तुम तो कारोबार करने वाले हो, न तुमने इतने जानवर मारे हैं और न ही सधने जितने पाप ही किए हैं, तो तुम क्यों नहीं पार हो सकते हो? जब उसके ऊपर कृपा हो सकती है तो फिर तुम्हारे ऊपर भी तो कृपा हो ही सकती है?

अब समय अनुमति नहीं दे रहा है, इसलिए अब यहीं पर समाप्ति है।

अनंद साहिब, गुर सतोतर, अरदास, हुकमनामा।

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

कितु बिधि मनु धीरे

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 32)

अतः भ्रमण करते-करते शिव जी महाराज किसी निर्जन स्थान के बीच से गुजर रहे हैं। वह एक उजड़ा हुआ नगर है, वहाँ पर कुछ वृक्ष पैदा हो गए हैं और जड़ी बूटियों व घासफूस ने उस जगह को पूरी तरह से ढका हुआ है। शिव जी महाराज जी वहाँ पर रुक गए और श्रद्धाभाव में आ गए। आपने उस जगह की परिक्रमा की और उसके बाद उसे नमस्कार की। पार्वती जी आपके साथ ही थे, वे कहने लगे, स्वामी जी! यहाँ पर न तो कोई मठ है, न कोई देहुरा है और न ही यहाँ पर कोई धर्म स्थान है बल्कि यह तो उजड़ा हुआ यानि कि फेल हो चुका एक नगर है, इसलिए आप यहाँ किस चीज को नमस्कार कर रहे हो? शिव जी महाराज जी कहने लगे, पार्वती! देखो! मान लो किसी मिट्टी के बर्तन में बहुत लम्बे समय तक घी रखा गया हो और उसके बाद एक दिन वह बर्तन टूट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाए लेकिन जब धूप चमकेगी तो उस बर्तन के टूटे हुए टुकड़ों मे से वह घी चमक मारेगा क्योंकि उसके रोमकूपों में घी रस गया होता है। ठीक इसी प्रकार से जिस किसी व्यक्ति ने परमात्मा की बन्दगी की होती है, वह जिस जगह पर बैठ जाए तो उस जगह की पवित्रता बहुत लम्बे समय तक अपने अन्दर प्रभाव समाए रहती है, जैसे कि वह मिट्टी का बर्तन अपने अन्दर घी के प्रभाव को समाए रहता है। वह (नाम रसिक पुरुष) जिस स्थान पर बैठा होता है, उस स्थान की तरफ व्यक्ति अनायास ही खिंचा चला आता है और वह स्थान हमेशा नाम सिमरन की प्रेरणा देता रहता है। उस जगह को ही नमस्कार करने को मन करता रहता है, इसी प्रकार से न जाने यह कितना पावन स्थान है।

अतः शिव जी महाराज कहने लगे, पार्वती! यहाँ पर एक परमात्मा के प्यारे ने अपना जीवन व्यतीत किया है, इसीलिए उसकी सुगन्धी हजारों वर्षों के बीत जाने के बाद भी उस जगह में विद्यमान है। यही कारण है कि मैं उस महापुरुष को नमस्कार करता हूँ। इस प्रकार की जगहों का प्रभाव समाप्त नहीं हुआ करता है और देव लोक भी उन जगहों को नमस्कार किया करते हैं।

अतः मैं यह निवेदन कर रहा था कि जिस जगह पर बैठकर आप भजन-बन्दगी करते हो वह जगह पावन हो जाया करती है, वहाँ एक ओरा बन जाया करता है। इस चीज का ज्ञान कुत्तों को हमसे अधिक होता है। कोई व्यक्ति किसी सीट पर बैठता है और दस-पन्द्रह दिन से वह बैठा नहीं है। आप कुत्ते को लाकर उसे सुँघा दो, वह उस व्यक्ति को पकड़ लेगा। कारण? कारण यह है कि उस व्यक्ति की सुगन्ध अभी तक वहाँ मौजूद है। अब यदि उसकी सुगन्ध कायम है तो स्वाभाविक है कि उसका प्रभाव भी कायम रहेगा। इसीलिए-

जिथै जाइ बहै मेरा सतिगुरु
सो थानु सुहावा राम राजे ॥ *अंग - 450*

तभी तो हम उन जगहों पर शीश झुकाते हैं जिन जगरों पर गुरुओं के चरण पड़े होते हैं। अतः जिस जगह पर आप रोज भजन-बन्दगी करते हो तो वह जगह अत्यन्त पवित्र हो जाती है। आप जब भी उस जगह पर आकर बैठोगे तो आपकी सुरति एकदम चढ़ जाएगी। इसी को 'आसन' कहा जाता है।

चौथा होता है प्राणों का ध्यान रखना। दरअस्ल मन जो है यह चंचल है, दौड़ता ही रहता है। मन का घोड़ा है - प्राण। श्वासों को रोक लो, मन रुक जाएगा। श्वासों और मन का पारस्परिक बहुत ही गहरा सम्बन्ध है। अतः यदि मन रुकता नहीं है तो महापुरुष बता देते हैं कि तुम इस प्रकार से नाम जपना शुरू कर दो, मन रुक जाएगा। दरअस्ल श्वासों की भी एक विद्या है, उसकी जितनी जरूरत है, उतना इसके बारे में अनुभवी महात्मा बतला देते हैं कि तुम इस प्रकार से कर लो। यानि कि वे बता देते हैं कि तुम इतना रेचक कर लो, इतना कुम्भक कर लो और इतना पूरक कर लो, मन रुक जाएगा। जब मन रुक गया तो फिर अन्दर से ही रस आने लग जाएगा।

वे बतला देते हैं कि तुम प्राणों पर अपनी सुरति को ले जाओ और वहाँ पर पहरा लगा दो। जब अन्दर की तरफ श्वास जाता है तो वहाँ पर 'वाहिगुरू' कह दो और जब बाहर की तरफ आता है तो 'सतिनाम' कह दो। या फिर जब श्वास

अन्दर को जाता है तो 'वाहि' कह दो और जब बाहर को वापिस आता है तो 'गुरू' कह दो। श्वासों को खाली न जाने दो। इसके आगे फिर जब श्वास अन्दर को जाता है तो तीन बार वाहिगुरू-वाहिगुरू-वाहिगुरू कहो, श्वास को अन्दर रोककर छः वार कहो और इसके बाद श्वास को बाहर की तरफ छोड़ते हुए तीन बार कहो। जिस प्रकार की भी किसी की स्थिति होती है, उसी प्रकार से महापुरुष बतला देते हैं। यह आन्तरिक विज्ञान है और अपने आप से नहीं आती है। इसके लिए बहुत टक्करें मारनी पड़ती हैं। यदि साथ में कोई पूर्ण समर्थ व योग्य सहायक हो तो फिर यह मार्ग आसान हो जाता है, दूसरी तरफ यदि सहायक अनजान है, तो वह तो पागल बना डालेगा क्योंकि प्राणायाम जो है, इसका कुम्भक 84 होता है, 42 इसका पूरक और 42 ही रेचक होता है यानि कि (84+42+42)=168 बार परमात्मा का नाम लिया जाता है। जब इतनी बार परमात्मा का नाम लिया जाएगा तो दिमाग के अन्दर गर्मी पैदा हो जाती है और उसका सिर घूमने लग जाता है। कारण इसका यह है कि गलत व्यक्ति के साथ वास्ता पड़ गया है, अनजान सहायक मिल गया है। जानकार को तो पता होता है कि इसकी मानसिक स्थिति कैसी है, कहीं ऐसा न हो कि यह पागल ही हो जाए। फिर तो न घर के रहे न घाट के। इधर भी कुछ न बना और उधर से भी गए। इस प्रकार से प्राणों का ध्यान रखना पड़ता है।

पाँचवा है - प्रत्याहार - इसमें यह है कि जब तुम्हारा मन इधर-उधर दौड़ता है तो इसे रोक कर फिर लगा दो -

मन लोचै बुरिआईआ, गुर शबदी इह मन होड़े।

ज्यों-ज्यों मन दौड़ता है त्यों-त्यों उसे घेर कर नाम की तरफ लगाना है इसे प्रत्याहार कहते हैं। यदि 12 सैकंड मन टिक जाए तो उसे धारणा कहते हैं। इन चीजों के लिए मेहनत करनी पड़ती है। जब बारह सैकेंड मन टिक गया तो इसे बारह बार टिकाओ फिर 144 सैकंड हो गए यानि कि दो मिनट और चौबीस सैकंड। जब अढ़ाई मिनट मन टिक जाए और इतने समय तक कोई भी ख्याल न आए तो इसे ध्यान कहते हैं। इसके बाद बारह ध्यान इकट्ठे कर लो यानि कि बारह ध्यान x अढ़ाई मिनट अर्थात धीरे-धीरे अभ्यास करते हुए आखिर आधे घंटे तक मन को हिलने नहीं देना और इसी प्रकार से जब अढ़ाई घंटे तक मन न हिले तो इसे समाधि कहते हैं। उसके बाद तो फिर चाहे जितना मर्जी लम्बी समाधि लगा लो। फिर मन कहीं नहीं जाता है और वह निरन्तर रस में लीन रहता है। अतः यह तरीका है जिसे अष्टांग योग कहते हैं। इसके बाद दो प्रकार की समाधि होती है। एक होती है साविकल्प समाधि और दूसरी होती है - निर्विकल्प समाधि। सविकल्प समाधि के अन्दर पता होता है कि मैंन समाधि लगाई हुई है, इसमें ध्याता, ध्यान व ध्येय की त्रिकुटी विद्यमान रहती है, जबकि निर्विकल्प समाधि में त्रिकुटी टूट जाती है, इसमें केल ध्यान रहता है, उसमे न तो ध्याता रह जाता है और न ही ध्येय ही रह जता है। इसके बाद आती है राजमेघ समाधि जो हफ्ते-हफ्ते, दो-दो हफ्ते की लम्बी समाधि होती है।

लेकिन जब मन दोबारा मुड़कर बाल-बच्चों व कारोबार में आता है तो फिर वह रस समाप्त हो जाता है। हठयोग और गुरमति यहाँ तक तो इकट्ठे ही चलते हैं। वैसे ही नहीं कहना चाहिए कि पतंजलि का योग ऐसे है या वैसे है। वह बिल्कुल ठीक कहता है लेकिन इसके आगे का जो रास्ता है, जिसमें कि दो-तीन सोपान शेष होते हैं, उसमें हमारा उनसे अन्तर रह जाता है और वह है नाम का रस और ज्ञान। ज्ञान जो है, वह गुरू के बिना नहीं हुआ करता है क्योंकि आज तक किसी को भी गुरू के बिना ज्ञान हुआ ही नहीं है। गुरू जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - बिनाँ गुराँ तों गिआन ना होवे,
पुछो ब्रहमे नारदे नूं।

भाई रे गुर बिनु गिआनु न होइ ॥
पूछहु ब्रहमे नारदै बेद बिआसै कोइ ॥ अंग - 59

ऋषियों-महापुरुषों को जाकर पूछ लो किसी को भी गुरू के बिना ज्ञान नहीं हुआ करता है। इस प्रकार से अष्टांग योग की पद्धति पर चलकर भी अवस्था तो बहुत ऊँची आ जाती है, लेकिन इसमें दोष कहाँ पर रह गया है, उसके बारे में भी मैं निवेदन किए देता हूँ।

दरअस्ल अष्टांग योग का जो कर्ता पतंजलि ऋषि है, उसके सामने तीन चीजें हैं। एक तो माया है, दूसरी है जीव और तीसरा है परमात्मा। जो परमात्मा है, वह कुछ नहीं करता है, बल्कि वह तो केवल सत्ता प्रदान करता है, जैसे कि एक चुम्बक किसी लोहे की फैक्टरी में लगा दें तो जैसे ही आप उस चुम्बक को हिलाते हो, सारे लोहे के टुकड़े हिलने शुरू हो जाते हैं, वे कहते हैं कि जो ईशर का प्रतिबिम्ब है, उसकी शक्ति है सत्ता। वह सत्ता जब प्रकृति पर पड़ती है, तीनों गुणों पर पड़ती है (रजो, तमो व सतो गुण पर पड़ती है) तो उनमें उथल पुथल उत्पन्न हो जाती है, फलस्वरूप उसमें जीव फँस जाता है। अब बेकसूर जीव इसके अन्दर फँस गया है और वह अरबों वर्षो से फँसा हुआ ही है -

कबीर निरमल बूंद अकास की लीनी भूमि मिलाइ ॥
अनिक सिआने पचि गए ना निरवारी जाइ ॥

अंग - 1375

इस प्रकार से वे जीव को स्वतन्त्र कर देते हैं। माया से

ऊपर निकल जाते हैं और राजमेघ समाधि में पहुँच जाते हैं, अब इसके बाद उसका कोई भी नियामक नहीं है। इस बिन्दु तक तो हम लोग इकट्ठे ही चलते हैं और यहाँ से हमारा (गुरमति का) और उनका (अष्टांग योग का) रास्ता अलग-अलग हो जाता है। दरअस्ल जब इतना टिकाव हो जाता है तो हमारे सामने जीव है, उसकी कोई हस्ती नहीं है क्योंकि वह तो परमात्मा का प्रतिबिम्ब है, परछाई है। जिस प्रकार से सूर्य का प्रतिबिम्ब पानी में पड़ता है लेकिन क्या उसका कोई अस्तित्व होता है? नहीं होता है। इस प्रकार से यह एक भ्रम उत्पन्न हो गया है इसी को भेद भ्रम कहते हैं। भ्रम के कारण ही जीव का पृथक अस्तित्व होता है जबकि वास्तव में तो वह परमात्मा ही है। असली बात यह है कि जब हउमै मर जाती है और ज्ञान हो जाता है तो शेष तो केवल परमात्मा ही रह जाता है। इसमें तीन का संकल्प नहीं है बल्कि आत्मा जहाँ से बिछुड़ी थी उसी में जाकर पुनः समा जाती है -

जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥
तिउ जोती संगि जोति समाना ॥
मिटि गए गवन पाए बिस्राम ॥
नानक प्रभ कै सद कुरबान ॥ ***अंग - 278***

यदि इससे नीचे की मंजिल पर ही रह जाएँ यानि कि अन्तिम मंजिल पर न चढ़ पाएँ तो वह भी बहुत अच्छी है। वह है -

सच खंडि वसै निरंकारु ॥
करि करि वेखै नदरि निहाल ॥ ***अंग - 8***

वहाँ पर वह कृपादृष्टि के द्वारा सबको देखता है वहाँ पर बहुत सारे जीव विभिन्न लोकों से आए हुए हैं। वह सगुणता का मण्डल है। लेकिन जो महापुरुष, ब्रह्मज्ञानी होते हैं वे इससे भी एक कदम आगे निकल जाते हैं और वे परमात्मा का ही रूप बन जाते हैं -

अब तउ जाइ चढे सिंघासनि मिले है सारिंगपानी ॥
राम कबीरा एक भए है कोइ न सकै पछानी ॥
अंग - 969

जब सिंहासन पर ही चढ़ गए तो फिर कोई कैसे पहचान सकता है।

इस प्रकार से हमारी जो गुरमति है, यह यहाँ से अलग हो जाती है। अष्टांग योग में साधक को शान्ति नहीं आती है क्योंकि वहाँ पर कोई ध्येय नहीं है जबकि गुरमति में ध्येय-वाहिगुरू या परमात्मा है। गुरमति में माया वगैरह कुछ भी नहीं है, यह तो सब परमात्मा की एक लीला हो रही है। माया में इतनी शक्ति कहाँ है कि वह परमात्मा के सामने खड़ी रह सके। अष्टांग योग में माया शक्तिशाली है, वह न तो पैदा होती है और न ही मरती है। जिस प्रकार से परमात्मा स्वतन्त्र है, उसी प्रकार से माया भी स्वतन्त्र है। दो तत्व हैं, जीव बेचारा गरीब तत्व है, इसलिए वह फँस जाता है। यह हमारा अष्टांग योग के साथ सैद्धान्तिक अन्तर है।

इस प्रकार से सुजान राय कहने लगे, भद्रपुरुष! मैंने अष्टांग योग भी किया है, मुझे समाधियों की अवस्था का भी पता है लेकिन मेरा मन नहीं लगता है। उसके मित्र ने कहा, प्यारे दोस्त! यदि तुम मेरी बात मानो तुम श्री गुरू गोबिन्द सिंह महाराज जी की शरण में चले जाओ। वहाँ पर जो विधि है वह भक्ति योग की विधि है, यानि कि भक्ति सहित ज्ञान की विधि है। वहाँ केवल ज्ञान नहीं है जबकि अष्टांग योग में प्यार की तो कोई बात ही नहीं आती है। उसमें वैराग्य की कोई बात ही नहीं है जबकि -

बिनु बैराग न छूटसि माइआ ॥ ***अंग - 329***

व्यक्ति ढला तो कहीं भी नहीं। बस इसने एक कसरत की है, ऊँची अवस्था पर पहुँच गया है लेकिन उसके अन्दर प्यार तो पैदा हुआ ही नहीं है। यदि हमारे अन्दर प्यार ही नहीं उत्पन्न हुआ है तो महाराज जी कहते हैं -

धारना - मिरतक कहीअै नानका,
जे प्रीत नहीं भगवंत।

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत ॥
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥
अंग - 253

यदि एक व्यक्ति के अन्दर पाँच पराकाष्ठा तक की विशेषताएँ हों यानि कि वह सारी दुनिया से अधिक सुन्दर हो, सबसे श्रेष्ठ कुल वाला हो, उसके बराबर अन्य कोई चतुर न हो यानि कि वह घंटों तक लगातार दलीलें देते रहने में सक्षम हो, मुख का पराकाष्ठा तक का ज्ञानी हो (अनुभवहीन चाहे वह हो), इसी प्रकार से वह संसार का सबसे धनवान व्यक्ति हो। यदि हम सांसारिक दृष्टि से देखें तो वह सबसे बड़ा व्यक्ति कहलाएगा। लेकिन यदि हम गुरू जी को इस सम्बन्ध में पूछते हैं तो वे कहते हैं कि इतनी विशेषताओं के होते हुए भी यदि उसके हृदय में परमात्मा का प्यार नहीं है तो वह एक मृतक व्यक्ति ही है। यह तो उसी प्रकार से है जैसे कि व्यक्ति किसी मृत व्यक्ति की विशेषताएँ गिनाने लग पड़े। *'मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत।।'* अब मृत व्यक्ति का क्या मूल्य है? आदमी के शरीर की तो वैसे भी कोई कीमत नहीं होती है, अभी अन्य चीजों की तो कीमत होती है। कोई पशु मर जाए तो उसकी खाल के जूते व अन्य चीजें बन जाती हैं, अटैची बन जाती है, मशकें बन जाती हैं, हाथी की कीमत है। यथा -

नरु मरै नरु कामि न आवै ॥
पसू मरै दस काज सवारै॥ *अंग - 870*

इस प्रकार इसके शरीर की तो कोई कीमत है नहीं और उल्टा इसके अन्तिम संस्कार पर और भी बहुत सारा खर्च करना पड़ता है। अतः गुरू जी कहते हैं कि यदि इस मनुष्य के अन्दर प्यार का भाव नहीं है फिर तो यह मृतक व्यक्ति के सदृश्य ही है। उसे गुरू महाराज जी जीवित नहीं मानते हैं बल्कि मृतक ही मानते हैं।

मैंने यह सब निवेदन इसलिए किए हैं क्योंकि ये सब साधन हमारी गुरमति की अपेक्षा पृथक हैं। वैसे हम इन्हें रद्द नहीं करते हैं बल्कि ये भी अपनी जगह पर ठीक हैं लेकिन इनमें कमी इसी बात की है, इनमें (अष्टांग योग में) प्यार नहीं है, वैराग्य नहीं है, पाश्चाताप करने की जगह नहीं है। अब मान लो हमने बहुत सारे गुनाह किए हैं, बार-बार अपने सिद्धान्तों से गिरे हैं, बेशुमार हमसे गल्तियाँ हो गई हैं, अब हमें तो इस प्रकार का भाव चाहिए कि हम अपने किए पर रो भी लें, पाश्चाताप भी कर लें कि हे वाहिगुरू जी! जो कुछ होना था, वह तो हमसे हो गया है, अब उसे तो हम ठीक कर नहीं सकते हैं, लेकिन आपका नाम तो हमने बख्शनहार सुना है कि -

सदा सदा सदा दइआल ॥
सिमरि सिमरि नानक भए निहाल ॥ *अंग - 275*

वह सदा ही दयालु है, वह कभी भी हमारे अवगुणों की विचार नहीं करता है, बल्कि हमें माफ कर देता है -

पिछले अउगुण बखसि लए प्रभु आगै मारगि पावै ॥
अंग - 624

पिछले अवगुणो को माफ करके वह हमें भावी सही मार्ग पर डाल देता है। इस प्रकार से आदमी के अन्दर जो अवगुणों का वजन भरा पड़ा है, उसके अन्दर जो न्यूनताएँ हैं, उनका बोझ हल्का कैसे होगा? अब मान लो अष्टांग योग के अभ्यास कर-करके सुरति चढ़ भी गई तो अन्दर से तो पूर्ववत् कठोर ही रह जाएगा। अतः जब तक अन्दर से नरम नहीं होगा, ढलेगा नहीं तब तक केवल शारीरिक अभ्यास मात्र का क्या लाभ हो पाएगा? मंजिल कैसे मिलेगी और सच्चिदानन्द की अवस्था की प्राप्ति कैसे होगी? इसलिए प्रेमाभक्ति ही श्रेष्ठ है।

गुरू छठे महाराज जी को पूछा, महाराज जी! आप भक्ति पर बहुत जोर देते हो और उसके बाद ज्ञान की बात करते हो। आप पहले ही ज्ञान की बात क्यों नहीं कर लेते हो? गुरू महाराज जी कहने लगे, देखो प्रेमीजनो! घी जो है, यह कितनी अच्छी चीज है, पौष्टिक आहार है, इसे खाकर व्यक्ति तगड़ा हो जाता है। इसके साथ ही यह कई प्रकार की बीमारियों को दूर करने की सामर्थ्य रखता है। लेकिन यदि उस व्यक्ति को, जिसे कि खाँसी हुई हो यदि उसे घी खिला दिया जाए तो उसे 'खई' रोग हो जाता है। इसी प्रकार से यदि बुखार वाले को खिला दिया जाए तो उसे दस्त लग जाएंगे, जिसका मेदा खराब हो, यदि उसे घी खिला दिया जाए तो उसे उल्टियाँ लग जाएँगी, लेकिन यदि इसी घी में खाँड या शक्कर डालकर खा लो तो यह दोष रहित हो जाता है और सुपाच्य हो जाता है। यदि घी को अकेला खाओगे तो असाधारण डकार आएँगे लेकिन यदि घी में शक्कर डालकर खाओ तो डकार नहीं आएँगे। गुरू जी कहने लगे कि प्रेमीजनो! ठीक इसी प्रकार से जो अकेला ज्ञान है, उसके द्वारा व्यक्ति विकारी हो जाता है, फिर वह कहने लगता है कि यह तो सारा कुछ ब्रह्म ही है और मैं भी ब्रह्म हूँ। इसीलिए मैं तो कुछ भी करूँ मुझे कोई भी दोष या पाप लगेगा ही नहीं क्योंकि मैं तो कुछ भी नहीं करता हूँ, सब कुछ तो परमात्मा ही करता है -

अहं ब्रहम असवी, निसंग भोग लछमी।

फिर तो सारे लोग विकारी हो जाएँगे, नास्तिक हो जाएंगे। इसीलिए भक्ति सहित ज्ञान ही श्रेष्ठ है। ज्ञान हमारी मंजिल है, लेकिन पहले वैराग्य है, भक्ति है और फिर ज्ञान है। ज्ञान में तो हम उस समय लेकर जाते हैं, जिस समय कि पक्के हो जाते हैं, ज्ञान को धारण करने के वास्तविक पात्र बन जाते हैं।

इस प्रकार से जो केवल अष्टांग योग है, उसके अन्दर न तो पाश्चाताप करने की कोई जगह है न ही हमारे द्वारा किए गए अवगुणों को बख्शाने की ही कोई जगह है। लेकिन भक्ति मार्ग में यह सब कुछ है। भक्ति नौ प्रकार की होती है। कीर्तन भक्ति में हम परमात्मा के साथ जुड़ते हैं -

कलजुग महि कीरतनु परधाना ॥
गुरमुखि जपीऐ लाइ धिआना ॥
आपि तरै सगले कुल तारे
हरि दरगह पति सिउ जाइदा ॥ *अंग - 1076*

श्रवण भक्ति वह होती है जैसे कि अब हम सत्संग में बैठकर श्रवण कर रहे हैं। इस श्रवण भक्ति का बहुत बड़ा महात्म्य है। यथा -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम ॥
अंग - 546

जो कीर्तन को श्रवण करते हैं और फिर उसे गाते हैं तो उन्हें यहाँ बैठे-बैठे ही करोड़ों यज्ञों का फल प्राप्त हो जाता है, अतः यह श्रवण भक्ति है। इसी प्रकार जब हम बैठकर

अपने आराध्य का सिमरन करते हैं वाहिगुरू जी को याद करते हैं, उसका गुणगान या यशगान करते हैं, वह सिमरन भक्ति कहलाती है। हम माला की मदद से नाम जपते हैं, श्वासों के द्वारा जपते हैं, पसन्ती वाणी में जपते हैं, परा वाणी में जपते हैं, आज्ञाचक्र में जपते हैं, त्रिकुटी में जपते हैं, दसवें द्वार में जपते हैं। इस प्रकार से इस नाम का फल बेशुमार होता है। जब वाहिगुरू की याद परिपक्व हो जाती है तो फिर भूलता नहीं है।

इसी तरह से पादसेवन भक्ति है, जिसमें हम अपने आराध्य के सेवा कार्य करते हैं।

फिर अर्चन भक्ति है। जैसे कि हम अपने गुरू महाराज जी के आगे यथाशक्ति कोई धन व पदार्थ भेंट करते हैं या लंगर वगैरह के लिए माया भेंट करते हैं।

इसी प्रकार से दास्य भक्ति है, जिसमें हम दूसरों की भक्ति करके प्रसन्न होते हैं, दूसरों के बर्तन माँजकर प्रसन्न होते हैं, दूसरों को पंखा करके खुश होते हैं।

इसके आगे है - सखा भक्ति। आपस में हम भाइयों की तरह प्यार करते हैं। बन्दन भक्ति है, हम नमस्कारें करते हैं कि हे सच्चे पातशाह! सब कुछ आपका ही है, हमारा तो यहाँ पर कुछ भी नहीं है। इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - प्रभ मै किछु नाही जी,
सभ किछु तेरा, सभ किछु तेरा।

यानि कि अकालपुरुष को सब कुछ अर्पित कर देना।

अतः जिस प्रकार से अष्टांग योग है, उसी प्रकार से गुरू घर के अन्दर भक्ति योग है। भक्ति योग में भी अष्टांग योग की ही भांति यम तथा नियम है, लेकिन वे बहुत सरल हैं।

भक्ति योग में पहला है - यम। यह होता है कि अपने अन्दर नम्रता को धारण करना -

कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ ॥
जिनि अैसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ ॥
अंग - 1364

विनम्र भाव में रहना, अपने अहंभाव को प्रदर्शित न करना कि मैं धनवान हूँ, पढ़ा लिखा हूँ, मैं सबसे आगे चलने वाला हूँ। यह यम कहलाता है।

दूसरा होता है - नियम। नियम है अपने नित्तनेम में पूरा रहना -

करि इसनानु सिमरि प्रभु अपना
मन तन भए अरोगा ॥ अंग - 611

एकान्त में रहना। एकान्त किसे कहते हैं?

सो इकाँती जिसु रिदा थाइ ॥ अंग - 1180

वासनाओं की तरफ से मन को रोककर रखना। किसी भी वासना को उत्पन्न न होने देना, इसे एकान्त कहा जाता है। फिर इसमें होता है 'आसन'। आसन का तात्पर्य है कि जहाँ पर भी मन करता है, सुन्दर स्थान देखकर, जो कि मौसम के अनुकूल हो, भजन करना, गुरवणी को पढ़ना। प्राणायाम के अन्दर फर्क होता है, वह यह है कि गुरू के वचनों को खींचकर अपने हृदय में धारण करना। यदि गुरू जी कहते हैं कि वाहिगुरू जी तो कण-कण में हैं -

जिमी जमान के बिखै सम्सति एक जोत है॥
न घाट है न बाढ है, न घाटि बाढि होत है॥
अकाल उसतति

इसे हृदय में पक्की तरह से धारण कर लेना यह पूरक कहलाता है। 'कुम्भक' होता है कि आत्म-विचार को करना कि मैं शरीर नहीं हूं, मैं पाँच तत्वों में से कोई तत्व नहीं हूँ। न तो मैं पाँचों कर्मेन्द्रियों में से कोई चीज हूँ, न ही मैं पाँचों ज्ञानेन्द्रियों व पाँचों प्राणों में से कोई चीज हूँ। न मैं मन हूँ, न बुद्धि हूँ, न चित्त हूँ और न ही अहंभाव हूँ बल्कि मैं तो आत्मा हूँ, जीव भाव भी मुझे अज्ञानतावश लग गया है। इस प्रकार से जो आत्म विचार है, इसे कुम्भक कहते हैं। रेचक जो होता है, वह यह है कि सारी बुराइयों जैसे निन्दा, ईर्ष्या, इन सबको उसी प्रकार से बाहर निकालना जैसे कि श्वास को बाहर निकाला जाता है। 'धारना' होती है मन को रोकना। 'ध्यान' होता है गुरू के सिद्धान्त को अपने हृदय में बसाना, 'समाधि' होती है, अपनी 'मैं' को मिटाकर, पाँचों भ्रमों को दूर करके स्वयं को ब्रह्म स्थिति में स्थापित करना।

अतः जो ये भ्रम हैं ये पाँच प्रकार के गिने गए हैं। गुरू जी इनके बरे में इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - मिटे ना भरम की काई जी,
जन नानकु बिनु आपा चीने।

जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई ॥
अंग - 684

वाहिगुरू जी तो हमारे अन्दर रहता है, हमारे साथ ही रहता है और कोई भी ऐसी जगह नहीं है, जहाँ पर कि वह नहीं रहता है। अब सवाल यह है कि हमें इस बारे में पता क्यों नहीं लगता है? इसका कारण यह है कि हमें भ्रम पड़ गया है।

सन्त महाराज जी (श्रीमान सन्त ईशर सिंह जी राड़ा साहिब) अपने दीवानों में बताया करते थे कि जब राजस्थान

नहर निकली तो वहाँ पर ठेकेदार पुल बना रहे थे, उन्होंने गाड़ियों वगैरह से बचाने के लिए थूनियाँ (लकड़ी के खम्भे) गाड़ दीं। उधर कुछ लोगों ने, जो कि नगर से दस मील की दूरी पर रहते थे, शहर की तरफ जाना था और बीच में वह नहर पड़ती थी, अतः वे आधी रात को ही घर से चल पड़े कि सुबह होते ही शहर पहुँच जाएंगे। जब वे नहर के पास आए तो वे क्या देखते हैं कि वहाँ पर तो कई आदमी खड़े हैं, उन्होंने सोचा कि ये तो लुटेरे होंगे, कहीं हम लोगों को लूट ही न लें। उनमें से एक ब्राह्मण था, वह बहुत बुद्धिमान था, उसने कहा जजमानो! मैं तो इस समय नहीं जाऊंगा, आप लोग जाओ। दूसरा बनिया था, वह भी सयाना था, कहने लगा मैं भी नहीं जाऊँगा क्योंकि कहीं पैसे ही न छीन लें, सूर्योदय होने के बाद ही चलेंगे। तीसरा था राजपूत, उसने कहा, थोड़ा सा तो मैंने सामान लाना है और थोड़े से ही मेरे पास पैसे हैं, यदि वे छीन भी लेंगे तो क्या हो जाएगा, घर वापिस लौट जाएँगे। उसने अपने पल्लू में ईंटों के रोड़े भर लिए कि चलो देखते हैं कि कितने आदमी हैं, यदि वे मेरे पीछे दौड़ेंगे तो मैं भी भाग जाऊँगा, मैं इनके हाथ नहीं आऊँगा। बाकी उसे रोकते रहे कि तुम भी रहने दो, हमारे लिए भी समस्या खड़ा करोगे। वह नहीं माना। कहने लगा वे भी चार ही हैं क्या हम लोग उनसे कमजोर हैं? हम लोग भी उन पर टूट पड़ेंगे, हम भी तो चार लोग हैं। वह चला गया, ईटों के रोड़े मारता रहा लेकिन उधर से कोई जवाब नहीं आ रहा था। यह कहने लगा, तुम कौन हो? बोलते क्यों नहीं? आखिर पास में ही जाकर उसने जोर से रोड़ा मारा। जब रोड़ा उस थूनी पर लगा तो उसकी आवाज आई, वह समझ गया कि यह तो लकड़ी की थूनी खड़ी है, हम लोग तो यूँ ही भ्रमवश डरते रहे, लकड़ी से ही डरते रहे।

वह अपने साथियों को आवाजें देने लग पड़ा कि आ जाओ, लेकिन वे आते ही नहीं हैं, कहने लगे, लुटेरे दूसरी तरफ छिपे होंगे। वह बोला मैं तो दूसरी तरफ क्या चारों तरफ घूम आया हूँ। कोई भी वहाँ नहीं है। वे तो केवल भ्रम के चोर बने हुए थे। अतः जब उसने अच्छी तरह से देख लिया तो फिर भ्रम समाप्त हो गया।

इसी प्रकार से वाहिगुरू जी ने यह सारा खेल या प्रपंच खड़ा किया हुआ है -

एक मूरति अनेक दरसन कीन रुप अनेक॥
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिर एक॥
जापु साहिब

उसने अपने खेल की रचना करके उसके अन्दर भ्रम डाल दिया है। भ्रम पड़ जाने के कारण परमात्मा और हो गया और इधर जीव बन गया तथा पाँच प्रकार के भ्रम पड़ गए। महाराज जी कहते हैं कि परमात्मा तो तुम्हारे अन्दर ही है -

काहे रे बन खोजन जाई ॥
सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई॥
तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई ॥1॥
बाहरि भीतरि एको जानहु इहु गुर गिआनु बताई॥ जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई ॥
अंग - 684

वह जो भ्रम की काई पड़ गई है, वह आत्म साक्षात्कर के बिना दूर नहीं हो सकती है। सयाने लोगों ने विद्वानजनों ने पाँच प्रकार के भ्रम कथन किए हैं। पहला भ्रम है - भेद भ्रम। भेद भ्रम होता है जैसे कि पानी के भरे हुए बर्तन पड़े हैं और चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब हजारों बर्तनों में पड़ रहा है। वह पानी हिल रहा है, ऐसा प्रतीत होता है कि मानो चन्द्रमा हिल रहा है। वह पानी की उपाधि के कारण, उसकी परछाई के कारण, पृथक चन्द्रमा प्रतीत होने लगता है। निश्चित रूप से ऊपर वाला चन्द्रमा तो खड़ा है लेकिन नीचे वाला हिलता हुआ प्रतीत हो रहा है। विद्वानजन कहते हैं कि इस प्रकार से भेद भ्रम पड़ गया है। भेद भ्रम के कारण ही यह स्वयं को जीव समझने लग पड़ा है लेकिन वास्तव में तो यह परमात्मा का अंश ही था। यथा -

कहु कबीर इहु राम की अंसु ॥ ***अंग - 871***

नीचे गिर गया और इतना नीचे गिर गया कि अब यह स्वयं को केवल जीव ही नहीं समझता है बल्कि साढ़े तीन हाथ की देह समझने लग पड़ा है। गुरू जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं कि -

जिउ प्रतिबिंबु बिंब कउ मिली है
उदक कुंभु बिगराना ॥
कहु कबीर अैसा गुण भ्रमु भागा
तउ मनु सुंनि समानाँ ॥ 4 ॥ 1 ॥ ***अंग - 476***

जब भ्रम टूट गया, पानी का बर्तन गिरा दिया तो फिर दूसरा चन्द्रमा ही न रहा। इसी प्रकार से जो अज्ञानता के संस्कार पड़े हुए थे, जब वे टूट गए तो फिर शेष क्या बचा? फिर तो शेष केवल परमात्मा ही रह गया क्योंकि अहंभाव समाप्त हो गया। इसी को भेद भ्रम कहते हैं। अविद्या के कारण आत्मा, जीव बन गया और दुख-सुख महसूस करने लग पड़ा। चित्त का जो धर्म है, वही है दुख और सुख। चित्त के धर्म को इसने अपने ऊपर ले लिया है। मान-अपमान, हानि-लाभ तथा निन्दा-स्तुति सारी चित्त की बातें हैं जबकि

आत्मा में तो कुछ भी नहीं है, वह तो सच्चिदानन्द है लेकिन भेद भ्रम के कारण आत्मा में महसूस होती हैं।

दूसरा भ्रम होता है - करतत्व भ्रम। जिस प्रकार से जो बिजली का बल्व होता है, उसके ऊपर यदि लाल रंग का कपड़ा रख दिया जाए तो वह लाल रंग का प्रतीत होने लगता है, जबकि वास्तव में तो वह सफेद ही है। ठीक इसी प्रकार से जब आत्मा बुद्धि की समीपता के कारण उसकी निकटता में आता है, तो वह दुख-सुख अनुभव करने लग पड़ता है। फिर वह कहता है कि मैं दुखी हूँ, मैं सुखी हूँ, मुझे लेखे दने पड़ेंगे, आदि।

तीसरा भ्रम होता है - संग भ्रम। इस शरीर में माया के तीनों गुणों का संगम होने के कारण आत्मा के अन्दर यह भ्रम पड़ गया कि आत्मा पृथक है। इसने शरीर के धर्मों को ही अपना धर्म बना लिया जिसके फलस्वरूप यह कहने लग पड़ा कि मैं हिन्दू हूँ, मैं सिक्ख हूँ, मैं मुसलमान हूँ, मैं इसाई हूँ, मैं बौद्ध हूं, मैं गोरा हूँ, मैं काला हूँ, मैं गरीब हूँ, मैं अमीर हूँ, मैं दुखी हूँ, मैं सुखी हूँ, यह भ्रम पड़ गया है। गुरू जी कथन करते हैं कि -

सहस घटा महि एकु आकासु ॥
घट फूटे ते ओही प्रगासु ॥ ***अंग - 736***

वह जो घड़े के अन्दर आकाश है, वह भी आकाश ही है क्योंकि घड़े को तोड़ दो तो आकाश के साथ आकाश मिला हुआ ही है लेकिन इसे नाम दे दिया है घटाकाश। इसी प्रकार से मकान के अन्दर जो आकाश है, यदि मकान को तोड़ दो तो वह आकाश दूसरे आकाश के साथ मिला हुआ ही लेकिन उसे मठाकाश कहते हैं। बादलों के आकाश को मेघाकाश कहते हैं। बादलों को दूर कर दो तो फिर वह बड़े आकाश के साथ ही मिला हुआ है, जिसे कि महाकाश कहते हैं। कहते हैं कि आकाश तो एक ही है लेकिन वह बँटा होने के कारण भ्रम पड़ गया है। चौथा भ्रम होता है - विकार भ्रम। यह भ्रम यह होता है कि संसार अलग है और परमात्मा अलग है। गुरू जी कहते हैं कि संसार और परमात्मा अलग नहीं है। यथा -

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई ॥
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई
नदरी हरि निहालिआ ॥
एहु विसु संसारु तुम देखदे
एहु हरि का रुपु है हरि रुपु नदरी आइआ ॥
अंग - 922

गुरू जी कहते हैं कि यह संसार तो परमात्मा का ही रूप है लेकिन विकार भ्रम के कारण तुम्हें ये दोनों पृथक-पृथक प्रतीत होते हैं। अब यदि अन्धकार में रस्सी पड़ी हुई हो तो वह साँप का भ्रम उत्पन्न करती है लेकिन जब प्रकाश होता है तो साँप तो रस्सी बन ही नहीं सकता है। फिर साँप कहाँ चला गया? दरअस्ल वह भ्रम का साँप था। इसी प्रकार से संसार और निरंकार का भ्रम है। यह समझता है कि संसार भी सत्य है और परमात्मा भी सत्य है। गुरू जी कहते हैं प्रेमीजनो! ऐसी बात नहीं है, यह तो सोने के गहनों की भांति है। जब इन्हें कुठाली में डाल देंगे तो यह पुनः सोना हो जाएगा। इस प्रकार से ये पाँच भ्रम होते हैं। अब समुद्र में तरंग उठती है और वह अलग प्रतीत होती है, लेकिन जब समुद्र शान्त होता है तो वह तरंग कहाँ चली जाती है? फिर वह तरंग उसी समुद्र में जहाँ से पहले उठी थी, पुनः समा जाती है। इसी प्रकार से सोने के गहनों की बात है और इसी प्रकार से सूत की माला है। निःशंक रूप से मनके अलग-अलग प्रतीत होते हैं लेकिन वास्तव में तो वे सब वही सूत ही हैं। जब तक हमारा यह आवरण या काई समाप्त नहीं होती है, तब तक हमें ज्ञान नहीं हो पाता है और ज्ञान तब तक नहीं हो पाता है, जब तक कि हमें आत्म साक्षात्कार नहीं होता है लेकिन होता यह है कि हमारी जो सुरति है, वह इस शरीर में भूल गई है और अब इसे सही मार्ग नहीं मिल पा रहा है क्योंकि यह सही मार्ग से भटक कर गलत मार्ग पर पड़ चुकी है। इसकी गलत धारणाएँ व गलत निश्चय हो गए हैं, इसीलिए यह भ्रमित हो गई है। दरअस्ल यह नौ दरवाजों में भ्रमित हो चुकी है और इसीलिए अब इसे अपना वास्तविक घर पूर्णतः विस्मृत हो चुका है।

सन्त महाराज जी बताया करते थे कि मान लो एक बहुत सुन्दर महल है और उसके अन्दर एक अत्यन्त सुन्दर कक्ष (कमरा) है जहाँ पर कि सारी सुख-सुविधाएँ व वांछित आहार भी पड़ा हुआ है और उसके अन्दर एक पक्षी रहता है। किसी कारणवश वह पक्षी बाहर निकल गया और बाहर नौ दरवाजे हैं, अब वह पक्षी एक दरवाजे से प्रवेश करता है और दूसरे दरवाजे से बाहर निकल जाता है। दूसरे में प्रवेश करता है तो तीसरे से निकल जाता है। इस प्रकार से वह बहुत दुखी हो रहा है किसी भी प्रकार से वह अपने घर में प्रवेश नहीं कर पा रहा है। गुरू जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - नउ घरि देखि जु कामन भूली,
बसतु अनूप ना पाई।

नउ घर देखि जु कामनि भूली बसतु अनूप न पाई ॥
अंग - 339

यह जो जीवात्मा थी, यह शरीर को देखकर पूरी तरह

से भूल गई है क्योंकि इस शरीर रूपी किले के नौ दरवाजे हैं -

नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै ॥
अंग - 954

यह जीवात्मा बाहर-बाहर तो घूमती रहती है लेकिन अन्दर वाले रास्ते को यह पूर्णतः भूल ही चुकी है। गुरू जी कहते हैं कि वह अनूप वस्तु तो तुम्हारे अन्दर पड़ी हुई है -

काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि ॥
साचा वासा पुरि गगनंदरि ॥
असथिरु थानु सदा निरमाइलु
आपे आपु उपाइदा ॥ 1 ॥
अंदरि कोट छजे हटनाले ॥
आपे लेवै वसतु समाले ॥
बजर कपाट जड़े जड़ि जाणै गुर सबदी खोलाइदा ॥
अंग - 1033

जब गुरू जी की कृपा के द्वारा, उसके शब्द के द्वारा आशा व शंका के बज्र कपाट खुल गए तो उसी समय यह अन्दर प्रवेश करने में सफल हो जाती है। यथा -

भीतरि कोट गुफा घर जाई ॥
नउ घर थापे हुकमि रजाई ॥ ***अंग - 1033***

जो नौ घर थे, उन्हें अब बन्द कर दिया गया है, ये अब बाहर की तरफ नहीं खुल रहे हैं, बल्कि अन्दर की तरफ खुलने लग पड़े हैं। अब दरवाजे तो सारे बाहर की तरफ ही खुलते हैं, आँखें भी बाहर की तरफ खुलती हैं, अन्दर की तरफ नहीं। कान और मुँह भी बाहर की तरफ ही खुलते हैं, अन्दर की तरफ नहीं। नासिका भी बाहर की तरफ ही खुलती है। स्पर्श भी बाहर की तरफ ही खुलती है, अन्दर की तरफ नहीं। अन्दर वाले स्पर्श का तो हमें पता ही नहीं है और यह सब डबल सिस्टम है। दरअस्ल ये जो सारे दरवाजे बाहर की तरफ खुलते हैं, ये हमें भुलाने वाले हैं और दूसरे वे हैं जो अन्दर की तरफ खुलते हैं, जिनके बारे में हमें कुछ भी पता नहीं है, उनके बारे में हमें कोई भी अनुभव नहीं है। हमें तो पता ही नहीं है कि दरवाजे अन्दर की तरफ भी खुलते हैं। ये बातें तो हमने कभी सुनी ही नहीं हैं। हम तो यही सुनते रहते हैं कि उसे पकड़ लो, उसे मार लो यदि तुम ऐसा नहीं करोगे फिर तो तुम सिक्ख भी कहलवा नहीं पाओगे। इस प्रकार से हम लोग तो बस ऊपर-ऊपर की बातें ही सुनते हैं, हमें आन्तरिक बातों का तो तनिक भी ज्ञान नहीं है -

नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै ॥
बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै ॥
अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै ॥
तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै ॥
सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई ॥
अंग - 954

वाहु वाहु सचे पातिसाह तू सची नाई ॥ अंग - 947

अब आन्तरिक बातों की जगह पर इसका ख्याल केवल बाहर की तरफ हो गया है और वास्तविक आन्तरिक बातों को तो यह पूर्णतः विस्मृत कर चुका है -

खट नेम करि कोठड़ी बाँधी बसतु अनूपु बीच पाई ॥
अंग - 339

परमात्मा ने अनुपम आत्म वस्तु को इस शरीर के अन्दर रखा हुआ है, नाम का अमृत इस शरीर के अन्दर रखा हुआ है। उस स्थान को जहाँ पर कि नाम का अमृत सुरक्षित है उसे छः दरवाजे बहुत सख्त व योजनाबद्ध ढंग से लगाए हुए हैं, ये दरवाजे खुलते नहीं हैं। यहाँ पर गुरमति का तथा अन्य साधनाओं का बहुत बड़ा फर्क है। वैसे बात एक ही है, पहुँचना दोनों ने वहीं पर है, लेकिन एक ने सरलता से पहुँच जाना है जबकि दूसरे ने कठिनाई से पहुँचना है। वे (अष्टांग योग वाले) उन दरवाजों को अपनी साधना के द्वारा तोड़ते हैं। जो रीढ़ की हड्डी का शिखर है, उसके ऊपर नाड़ी चढ़ी हुई है जो कि साँप के मुँह जैसी है और इसीलिए उसे भुजंगा नाड़ी कहते हैं। प्राणायाम के द्वारा, श्वासों को रोककर, अपान वायु की मदद से उसे गर्माहट देते हैं, फलस्वरूप वह नरम हो जाती है और उसका मुँह खुल जाता है। उस जगह पर कुण्डलिनी का निवास है। सारी इलैक्ट्रानिक शक्ति इसी बिन्दु पर है, यही कारण है कि यदि रीढ़ की हड्डी को कुछ हो जाए तो अधरंग हो जाता है क्योंकि यह कुण्डलिनी शक्ति रीढ़ की हड्डी के माध्यम से सारे शरीर को नियन्त्रित करती है। रीढ़ की हड्डी में दोष उत्पन्न होने से अधरंग इसलिए हो जाता है क्योंकि जो इलैक्ट्रानिक करंट इसके अन्दर से जा रही थी, वह जाने से रह गई है। अतः अष्टांग योग वाले कुण्डलिनी शक्ति को जागृत करते हैं जो कि रीढ़ की हड्डी का अन्तिम हिस्सा है। इसे मूलाधार चक्र कहते हैं। गुरू जी कहते हैं छः नियमों का पालन किया है, प्रथम चक्र जो मूलाधार चक्र है, उसे बन्द कर दिया है। वहाँ पर गर्माहट देते हैं, जिस कारण से वह माँस पिघल जाता है और श्वास ऊपर की तरफ कुण्डलिनी की मदद से चल पड़ता है। दूसरा जो चक्र होता है वह कहलाता है - स्वाधिष्ठान चक्र। यह मूलाधार चक्र से थोड़ा सा ऊपर होता है। यह उपस्थित इन्द्रियों की जड़ में हुआ करता है। तीसरा चक्र नाभि के अन्दर होता है जो कि मणिपूरक चक्र कहलाता है। चौथा अनाहद चक्र होता है जो कि नाभि से थोड़ा ऊपर की तरफ होता है। पाँचवां विशुद्ध चक्र होता है, यह गले के अन्दर होता है, इसे कण्ठ चक्र भी कहते हैं। छठा होता है - आज्ञाचक्र। यह दोनों आँखों

और नाक की जड़ में होता है। उसी की सीधी रेखा में, रीढ़ी की हड्डी में सुखमना नाड़ी होती है जो कि दसवें द्वार तक पहुँचती है। अतः गुरू जी कहते हैं कि -

खट नेम करि कोठड़ी बाँधी बसतु अनूपु बीच पाई ॥
अंग - 339

ये छः नियम बनाकर इस शरीर रूपी घर का निर्माण कर दिया है और इसके शीर्ष पर आत्म तत्व है, जहाँ पर परमात्मा ने अपना निवास स्थान बना कर आसन लगा लिया है। उस जगह पर अमृत का कुण्ड है। गुरू जी फुरमान करते हैं -

कुंजी कुलफु प्रान करि राखे करते बार न लाई ॥
अंग - 339

यह जो नाम की चाभी है, इसके द्वारा प्राणों को ताले के अन्दर विधिपूर्वक रख दिया है, अब वे बाहर नहीं निकल सकते हैं। अब जो पाँचों प्राण कार्य कर रहे हैं, वे शरीर को छोड़ते नहीं हैं, जब तक कि उन्हें छुड़वाया न जाए। दरअस्ल ये ताले के अन्दर बन्द हैं। जब हम वाहिगुरू जी के आगे अरदास करते हैं तो फिर वह तनिक भी देर नहीं लगाता है और मार्ग को प्रशस्त कर देता है। गुरू जी कहते हैं -

अब मन जागत रहु रे भाई ॥ अंग - 339

ऐ मन! अब तुम जागृत अवस्था में रहो क्योंकि तुमने गाफिल होकर सारा जन्म यूँ ही गंवा लिया है। तुम्हारी एक-एक इन्द्रिय ने तुम्हें धोखा दिया है।

गाफलु होइ कै जनमु गवाइओ चोरु मुसै घरु जाई ॥
अंग - 339

जिस घर की रक्षार्थ तुमने पहरेदार नियुक्त किए थे वे तो स्वयं चोरों की भांति तुम्हारे शरीर रूपी घर में ताक लगाए बैठे हैं -

नैनहु नीद पर दिसटि विकार ॥
स्रवण सोए सुणि निंद वीचार ॥
रसना सोई लोभि मीठै सादि ॥
मनु सोइआ माइआ बिसमादि ॥ 1 ॥
इसु ग्रिह महि कोई जागतु रहै ॥
साबतु वसतु ओहु अपनी लहै ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
सगल सहेली अपनै रस माती ॥
ग्रिह अपुने की खबरि न जाती ॥
मुसनहार पंच बटवारे ॥
सूने नगरि परे ठगहारे ॥ अंग - 182

वे दिन-रात तुम्हें लूटते हैं -

इसु देही अंदरि पंच चोर वसहि
कामु क्रोधु लोभु मोहु अहंकारा ॥
अंम्रितु लूटहि मनमुख नही बूझहि
कोइ न सुणै पूकारा॥ अंग - 600

जो तुम्हारे पहरेदार थे, वे सब तो तुम्हें धोखा दे गए हैं, वे तो तुम्हारी सुरक्षा की पहरेदारी छोड़कर अपने हित का ही कार्य करने लग पड़े हैं -

धारना - बहु रंग तमासे, अ्खीआँ वेख ना र्जीआँ।

अखी वेखि न रजीआ बहु रंग तमासे।
उसतति निंदा कंनि सुणि रोवणि तै हासे।
सादी जीभ न रजीआ करि भोग बिलासे।
नक न रजा वासु लै दुरगंध सुवासे।
रजि न कोई जीविआ कूड़े भरवासे।
पीर मुरीदाँ पिरहड़ी सची रहरासे॥
भाई गुरदास जी, वार 27/9

पंच पहरुआ दर महि रहते
तिन का नही पतीआरा ॥ अंग - 339

अब इनका विश्वास कोई क्या करे क्योंकि ये सब अपने-अपने विषयानन्द में उलझ कर रह गए हैं। इस प्रकार से यह जीव पूर्णतः विस्मृत हो चुका है। परिणामस्वरूप यह तत्व वस्तु को छोड़कर किसी अन्य चीज की तलाश में लग गया है -

अब कलू आइओ रे ॥ इकु नामु बोवहु बोवहु ॥
अन रुति नाही नाही ॥ मतु भरमि भूलहु भूलहु ॥
अंग - 1185

हमारा जो छुटकारा होना है वह नाम के बीज को बोकर और नाम की खेती करके ही होना है -

मनु हाली किरसाणी करणी सरमु पाणी तनु खेतु ॥
नामु बीजु संतोखु सुहागा रखु गरीबी वेसु ॥
भाउ करम करि जंमसी से घर भागठ देखु ॥ 1 ॥
अंग - 595

वे भाग्यशाली मनुष्य हैं जो कि नाम की खेती करेंगे। हम लोगों के लिए गुरू महाराज जी अत्यन्त सरल मार्ग 'नाम का मार्ग' लेकर आए। इस पर प्रत्येक व्यक्ति चलकर सफलता प्राप्त कर सकता है, यह कोई कठिन मार्ग नहीं है, इसमें कोई कठिन बात भी नहीं है।

साधु संगत जी! अब समय अनुमति नहीं प्रदान कर रहा है, इसलिए अब यहीं पर समाप्ति है।

अनंद साहिब, गुर सतोतर, अरदास, हुकमनामा।

सत संगति कैसी जाणीऐ।। जिथै एको नामु वखाणीऐ।।

सन्त बाबा हरपाल सिंह

सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥
मन अंतर की उतरै चिंद ॥ *अंग - 295*

रहिणी रहै सोई सिख मेरा॥
उह साहिब मै उस का चेरा॥

रहित पिआरी मुझ को
सिख पिआरा नाहि।

आतम रस जिह जानही, सो है जलस देव।
प्रभ महि मो महि रंचक नाहन भेव।

जब लग रहे जलसा रहे निआरा॥
तब लग तेज दीओ मै सारा॥
जब इह गहै बिपरन की रीत॥
मैं न करों इन की प्रतीत॥ *(सरब लोह ग्रंथ 'चौं)*

बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥
छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥
बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥
अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥ *अंग - 267*

जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामाँ मनि मंतु ॥
धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु ॥
अंग - 319

जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरु मनि भावै ॥
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरु उपदेसु सुणावै ॥
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ *अंग - 305*

परम सम्माननीय गुरु प्यारी साधु संगत जी! आओ! ख्यालों को बाहर जाने से रोकते हुए अपने चित्त को एकाग्र करें। जिह्वा की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करो जी - 'सतिनाम श्री वाहिगुरू'।

सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥
जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥ *अंग - 72*

हम सब लोग कोशिश करते रहते हैं कि हमें नाम मिल जाए लेकिन नाम तो सबके अन्दर है। यह बाहर से तो मिल ही नहीं सकता है। यदि कोई कहता है कि नाम तो अमुक व्यक्ति के द्वारा मिल जाएगा, तो यह सरासर गलत है। इस प्रकार के गुरू, पीर, आचार्य, महापुरुष आदि मन्त्र तो देते होंगे लेकिन नाम नहीं और हमारे घर का मन्त्र है -

वाहिगुरु गुरमंत्र है जपु हउमै खोई॥ भाई गुरदास जी

पाँच प्यारे खण्डे-बाटे का अमृतपान करवाते हैं और वे गुरुमन्त्र तथा मूलमन्त्र प्रदान कर देते हैं लेकिन 'नाम' तो अपने अन्दर से ही प्रकट हुआ करता है -

बाहरि ढूढन ते छूटि परे
गुरि घर ही माहि दिखाइआ था ॥ *अंग - 1002*

जो इस शरीर रूपी घर में से अपना वास्तविक घर दिखला दे -

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
अंग - 1291

बाणी गुरु गुरु है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥
अंग - 982

शरीर कभी भी गुरू नहीं हुआ करता है। यदि शरीर भी धारण किए हैं तो जो गुरवाणी आई है, वह -

धुर की बाणी आई तिन सगली चिंत मिटाई।

गुरवाणी ही गुरू है। जब गुरू साहिब ने शरीर में भी विचरण किया तो उस समय भी गुरवाणी ही गुरू थी। धन्य श्री गुरू गोबिन्द सिंह महाराज जी श्री आनन्दपुर साहिब के क्षेत्र में साढ़े उन्तीस साल विचरण करते रहे और उनसे पहले वाले गुरू भी विभिन्न स्थानों पर विचरण करते रहे। निःशंक रूप से वह धरती भी बहुत पावन है, लेकिन उस काल में भी गुरू तो गुरवाणी ही थी, इसीलिए शरीर में रहते हुए भी गुरू साहिबान गुरवाणी के साथ ही जोड़ते रहे। यथा -

सतिगुर बचन बचन है सतिगुर
पाधरु मुकति जनावैगो॥ *अंग - 1309*

अतः शरीर कभी भी गुरू नहीं हुआ करता है। यदि गुरुओं, पीरों व महापुरुषों ने शरीर धारण भी किए तो भी

वे गुरवाणी के साथ ही जोड़ते रहे हैं।

इस प्रकार से जहाँ केवल नाम की ही व्याख्या होती है, वही सत्संग कहलाता है। यही कारण है सत्संग यूँ ही अनायास ही नहीं मिल जाया करता है। हाँ, कुसंगत अनायास ही प्राप्त हो जाया करती है। यथा -

बिनु भागा सतसंगु न लभै
बिनु संगति मैलु भरीजै जीउ ॥ *अंग - 95*

सत्संग के बिना कल्युग का प्रभाव पड़ जाया करता है यानि कि व्यक्ति के मन पर अज्ञानता की मैल पड़ जाया करती है। अतः आओ! हम सब चित्त वृत्तियों को एकाग्र करके सत्संग का लाभ प्राप्त करें -

प्रभ की उसतति करहु संत मीत ॥
सावधान एकागर चीत ॥ *अंग - 295*

यदि हमारा चित्त कुछ समय के लिए ही एकाग्र हो जाए तो भी गुरू जी की बहुत महान कृपा हो जाया करती है -

एक चित जिह इक छिन धिआइओ
काल फास के बीच न आइओ। *अकाल उसतति*

'वाहिगुरू' गुरु मन्त्र कितना शक्तिशाली है, यह इस बात से ही स्पष्ट हो जाता है कि श्री गुरू नानक देव महाराज जी 36 युगों की कमाई करके इसे लेकर आए हैं -

कलजुग नानक नाम सुखाला। *भाई गुरदास जी*

अन्य मन्त्र इतने सरल नहीं हैं। यह मन्त्र तो सहजता से ही श्वास पर आ जाता है। जब अन्दर की ओर श्वास जाता है तो 'वाहि' कहो और जब बाहर की ओर आता है तो 'गुरू' कहो। आप जितना गहरा श्वास लोगे उतना लाभ ही लाभ है। गहरा श्वास जब अन्दर की ओर जाता है तो -

दुख रोग का डेरा भंना ॥ *अंग - 627*

श्वास को अन्दर से गहरा भर लो, वह हमारे अन्दर के रोगों को बार निकालता है -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥ *अंग - 305*

हम लोग स्वयं को सिक्ख कहलवाते हैं, गुरू जी कहते हैं कि यह बात तो ठीक है कि मुझे बाणी और बाणा (गुरवाणी और सिक्खी वेश-भूषा) बहुत प्यारी लगती है लेकिन वास्तव में तो -

रहित पिआरी मुझ को सिख पिआरा नाही।

सिक्खी की जो वास्तविक नियमावली है, उसे पाँच प्यारे बतलाते हैं। पांच रहतें (मुख्य नियम) है और चार कुरहतें (निषेधाज्ञाएँ) हैं। ये हमारी बाहरी नियमावली है, जबकि आन्तरिक नियमों के बारे में हमें गुरवाणी बताती है -

पर त्रिअ रुपु न पेखै नेत्र ॥
साध की टहल संतसंगि हेत ॥
करन न सुनै काहू की निंदा ॥
सभ ते जानै आपस कउ मंदा ॥
गुर प्रसादि बिखिआ परहरै ॥
मन की बासना मन ते टरै ॥
इंद्री जित पंच दोख ते रहत ॥
नानक कोटि मधे को ऐसा अपरस ॥ *अंग - 274*

हैनि विरले नाही घणे फैल फकड़ु संसारु ॥
अंग - 1411

अतः एक विचार चल रही थी कि यदि सिक्ख कहलवाते हो तो अमृत वेला में उठो, जिस समय कि सारा संसार सोया हुआ होता है -

तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता
सुतिआ रैणि विहाणी ॥ *अंग - 920*

तीनों गुणों (रजो, तमो व सतो) के अन्दर सारा संसार सोया पड़ा है। गुरू जी कहते हैं कि ऐ प्रेमीजन! पता नहीं, कब काल की गुलेल आकर लग जानी है और वह समय आ जाना है जो कि सबके आना निश्चित है। इसलिए जो चौरासी का चक्र समाप्त होने के बाद यह मनुष्य जन्म प्राप्त हुआ है, उसका लाभ उठा ले -

लख चउरासीह जोनि सबाई ॥
माणस कउ प्रभि दीओ वडिआई ॥
इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै
सो आइ जाइ दुखु पाइदा ॥ *अंग - 1075*

मनमुखि आवै मनमुखि जावै ॥
मनमुखि फिरि फिरि चोटा खावै ॥
जितने नरक से मनमुखि भोगै
गुरमुखि लेपु न मासा हे॥ *अंग - 1073*

जो जाग जाता है, वह फिर इस नींद में सोता नहीं है। शारीरिक आराम के लिए तो नींद जरूरी है लेकिन अज्ञानता की नींद में से वह जाग जाता है। फिर वह ध्यान में बैठकर अभ्यास करता है। फिर वह उस कार्य को करता है जिसे करने के लिए उसे यह जन्म मिला है। सत्संग में आकर उसे नाम सिमरन करने की व ध्यान करने की युक्तियाँ प्राप्त होती हैं। तीन प्रकार के ध्यान होते हैं - प्रतीक ध्यान, सम्पत ध्यान और अहंग्रह ध्यान। अपनी-अपनी अवस्था के अनुसार नाम

का जप किया जाता है। कोई बैखरी वाणी में जपता है, कोई मध्यमा में, कोई पसन्ती में और कोई परा वाणी में नाम का सिमरन करता है। कोई बोल-बोल कर वाहिगुरू-वाहिगुरू करता है और कोई अन्दर के आनन्द का अनुभव करता है-

बिनु जिहवा जो जपै हिआइ ॥
कोई जाणै कैसा नाउ ॥ ***अंग - 1256***

यह अवस्था की बात है, इसी को आत्म मार्ग कहा जाता है। महापुरुष नाम सिमरन की युक्तियों को खोल कर बतला देते हैं, अन्यथा अन्य कोई बतलाता ही नहीं है क्योंकि-

होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि ॥
अंग - 1384

लेकिन महापुरुष तो अत्यन्त दयालु प्रकृति के हुआ करते हैं। गुरू जी का फुरमान है -

नामु कहत गोविंद का सूची भई रसना ॥
अंग - 811

नाम कहने से यह रसना, रस के द्वारा भर जाती है। अब बैखरी वाणी के द्वारा बोल कर वाहिगुरू-वाहिगुरू यदि करते रहो तो फिर शनैः शनैः नाम अन्दर चला जाता है, फिर कण्ठ के अन्दर नाम का जप होने लग जाता है और नाम सिमरन का फल (मध्यमा वाणी में) दस गुणा बढ़ जाता है। इसके आगे फिर फल बढ़ता ही चला जाता है। पसन्ती वाणी, जो कि हृदय की वाणी है, में दस गुणा फल और अधिक बढ़ जाता है। ये सारी आन्तरिक बातें यानि कि अगम्य बातें हैं। महापुरुषों ने 'बात अगम की' पुस्तक में आन्तरिक बातों को बहुत खोल-खोलकर लिखा है, उन्होंने इसके अन्दर अपने अनुभवों को गुरवाणी के प्रकाश में कलमबन्द किया है। यही कारण है कि आपका एक-एक वचन, सूत्र का कार्य करता है। इस पुस्तक के सात भाग हैं।

इनका अध्ययन करने के बाद हम अपने जीवन का उसके साथ मिलाप करके देखते हैं कि हम कहाँ पर खड़े हैं। हमें बाहर की बातों के बारे में तो पता है, हम स्नान भी करते हैं कि चलो पानी के साथ स्नान कर लें लेकिन गुरवाणी का स्नान कैसे करना, इन सबके बारे में, यानि कि हमारे अन्दर की रहतों के बारे में, गुरवाणी ही बतलाती है -

करि इसनानु सिमरि प्रभु अपना
मन तन भए अरोगा ॥
कोटि बिघन लाथे प्रभ सरणा प्रगटे भले संजोगा ॥
अंग - 611

वह कैसा भला संयोग बनता है, शुभ समय बनता है जिस समय कि हम स्नान करने के बाद उसकी याद या सिमरन में बैठते हैं -

उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ ***अंग - 305***

उस अमृत के सरोवर में स्नान करना, श्री हरिमन्दिर साहिब, अमृतसर के सरोवर में स्नान करना कितना फलदायक है -

रामदासि सरोवर नाते ॥
सभ लाथे पाप कमाते ॥ ***अंग - 624***

पानी में वाणी का असर होने से पानी की तासीर ही बदल गई। उसमें स्नान करने से कोढ़ियों के रोग दूर हो गए। इसी प्रकार से जो हमारे अन्दर का स्नान है, उसके बारे में हमें महापुरुष इस प्रकार से बतलाते हैं -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥ ***अंग - 293***

इस शरीर के अन्दर तो न जाने क्या-क्या पड़ा हुआ है लेकिन -

जो ब्रहमंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै ॥
अंग - 695

जो खण्ड-ब्रह्मांड बाहर दिखाई पड़ते हैं वे सब हमारे अन्दर भी हैं लेकिन पता किन्हें लगता है? 'जो खोजै सो पावै' जिन्होंने खोज की है, कमाइयाँ की हैं, उन्हें पता लग पाता है, इसीलिए वे हम सबको सचेत करते हैं कि ऐ भद्रपुरुष! तुम इस आत्म मार्ग पर चलकर खोज करो और फिर इस मार्ग पर आगे बढ़ो -

उपदेसि गुरु हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥ अंग - 305

गुरु के उपदेश का पालन करो लेकिन हम तो -

अवर उपदेसै आपि न करै ॥
आवत जावत जनमै मरै ॥ ***अंग - 269***

धन्य गुरू गोबिन्द सिंह महाराज जी कहते हैं कि यदि तुम्हारे पास केवल 'बाणा' (वेश-भूषा) है और गुरवाणी नहीं है तो फिर तो तुम्हारी अवस्था इस प्रकार की है -

भेख दिखाओ जगत को लोगन को बसि कीन॥
अंति कालि काती कटियो
बासु नरक मो लीन॥56॥
बचित्र नाटक, अ. 6-56 (2)

अतः अब आन्तरिक यात्रा पर चलकर उपदेश की कमाई करो। इस प्रकार का जप फिर अजपा जाप हो जाता है। फिर आगे अवस्थाएँ बढ़ती चली जाती हैं। मध्यमा से आगे पसन्ती में फल और अधिक बढ़ जाता है, फिर परावाणी यानि कि अनुभव की वाणी आ जाती है। इस प्रकार ये चार वाणियाँ हैं और चार ही खाणियाँ हैं। चार खाणियाँ हैं - अंडज, जेरज, सेतज और उत्भुज। अण्डों से पैदा होने वाले, झिल्ली से पैदा होने वाले, पसीने से पैदा होने वाले और धरती में से पैदा होने वाले जीव, चार खाणियाँ कहलाते हैं। ठीक इसी प्रकार से चार वाणियाँ हैं। शनैः शनैः अभ्यास करते-करते अवस्था इतनी ऊँची हो जाती है कि -

इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस ॥
लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस ॥
अंग - 1

सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥
मन अंतर की उतरै चिंद ॥ *अंग - 295*

उसकी याद करते -करते, सिमरन करते-करते अवस्था बहुत ऊँची हो जाती है क्योंकि सिमरन के अन्दर असीम शक्ति है -

उडै उडि आवै सै कोसा तिसु पाछै बचरे छरिआ ॥
उन कवनु खलावै कवनु चुगावै
मन महि सिमरनु करिआ ॥ *अंग - 495*

बर्फीले इलाके में से छः महीने बाद कूँजें मैदानी इलाकों में आती हैं। जिस समय वे आती हैं, तो उनके बच्चे अण्डों में से निकले हुए व पले हुए मिलते हैं। अब उनका पालन पोषण कैसे व किसने किया? उन्होंने यह सब सिमरन शक्ति के द्वारा किया, ध्यान शक्ति के द्वारा किया। कछुआ पानी में रहता है लेकिन वह अपने अण्डे बाहर रेत में देता है। वह ध्यान शक्ति के द्वारा ही अण्डों में से बच्चे पैदा करके उन्हें अपनी तरफ पानी में खींच लेता है। बच्चे पैदा होते ही पानी की तरफ दौड़ते हैं। अतः यह ध्यान शक्ति कितनी शक्तिशाली है।

यदि हम भी परमात्मा का ध्यान करें तो हमारे दुख व रोग समूल नष्ट हो जाएँगे -

सरब रोग का अउखदु नामु ॥
कलिआण रुप मंगल गुण गाम ॥ *अंग - 274*

दवाई तो सबके अन्दर विद्यमान है लेकिन हमें उसके बारे में पता नहीं चल पाता है। जिन्हें पता लग जाता है, वे असंख्य लोगों के जीवन को परिवर्तित कर देते हैं। आज का युग तो मीडिए का युग है, फलस्वरूप महापुरुषों के अनुभव के वचन लिखितों के रूप में आ गए, वीडियो फिल्में बन गईं, फलस्वरूप असंख्य लोगों के जीवन बदल गए हैं। वैसे हम सब तो रोगी लोग हैं -

जो जो दीसै सो सो रोगी ॥
रोग रहित मेरा सतिगुरु जोगी ॥ *अंग - 1140*

हम सब स्वयं को स्वस्थ नहीं कह सकते हैं। किसी सन्त ने कहा है -

मंने नाउ सोई जिणि जाइ ॥
अउरी करम न लेखै लाइ ॥ *अंग - 954*

समस्त दुखों का उपचार हमारे अन्दर से ही हो जाता है-

हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥
गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥
गुरि पूरै संजमु करि दीआ ॥
नानक तउ फिरि दूख न थीआ ॥ *अंग - 259*

लेकिन हम लोग इस नाम की दवाई का प्रयोग ही नहीं करते हैं। हम तो बस बहिरंग साधनों का ही प्रयोग करते हैं। उन्हें तो करते रहो, ठीक है क्योंकि -

फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥ *अंग - 305*

सूर्योदय होने के बाद नित्तनेम करो, जो कि पाँच प्यारों ने बताया है, पाँच वाणियों का नित्तनेम करो, रहिरास साहिब व कीरतन सोहिला करो। ये बहुत आवश्यक है -

इह बाणी जो जीअहु जाणै
तिसु अंतरि रवै हरि नामा ॥ *अंग - 797*

सारी वाणी हमें नाम के साथ ही जोड़ती है -

जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरु मनि भावै ॥ *अंग - 306*

नाभि पर जोर देकर प्राणों की मदद से सुरति को शब्द की तरफ लेकर चलो। शब्द है धुन -

धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ
गुरमुखि अकथ कहानी ॥ *अंग - 879*

हमारा मार्ग है सुरति तथा शब्द का मार्ग है। यहाँ पर, श्री आनंदपुर साहिब की धरती पर, माता जीतो जी को, गुरू दशमेश जी ने सुरति शबद मार्ग का उपदेश दिया था। महापुरुषों ने पुस्तक लिखी है 'सुरति सबदि मार्ग', उसे पढ़कर देखना और विचार करना कि सुरति को शब्द के साथ कैसे

जोड़ना है? प्राणों की मदद कैसे लेनी है? वह सारा उपदेश महापुरुषों के सात दीवानों का संग्रह है और वह जन साधारण के लिए पुस्तक के रूप में उपलब्ध है -

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे ॥
सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे॥
अंग - 938

मुरगाबी की मिसाल दी है। नाभि पर श्वासों की मदद से सुरति को इतना ऊपर उठाओ कि शब्द की धुन सुनाई देने लग पड़े। जिस तरफ से वह धुन आती है उस तरफ को सुरति को शब्द के साथ जोड़ देना है। यही हमारा गुरमति मार्ग है और यह सब पृथक-पृथक अवस्थाओं की बातें होती हैं।

गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै ॥
नानक गुरमुखि साचि समावै ॥ अंग - 941

कितनी बड़ी अवस्थाएँ हैं कि जिन्हें सुनकर मन आश्चर्यजनक अवस्था में पहुँच जाता है -

अनहत बाणी थानु निराला ॥
ता की धुनि मोहे गोपाला ॥ अंग - 186

कितना बड़ा खजाना है -

पीउ दादे का खोलि डिठा खजाना ॥ अंग - 186

अतः अभ्यास किया करो। एक बार सारे प्रेमीजन संगत रूप में बोल लो। गुरू जी कहते हैं कि -

देही किस की बापुरी पवितु होइगो ग्रामु ॥
अंग - 1370

जो रसना अभी तक नहीं भी बोली, वह भी 'वाहिगुरू' बोलकर तो देखो। जिस समय से मन में ख्याल आना शुरू हो जाता है कि सत्संग में जाना है, उसी समय से हाजिरी लगनी शुरू हो जाती है। मन दौड़ता है, यह पवन की सवारी करता है, श्वास की सवारी करता है इसलिए श्वास को ही नियन्त्रित कर लो। मन रूपी घोड़ा जो दौड़ता है, इसे श्वास की चाबुक के द्वारा नियन्त्रित कर लो। जैसे कि -

खालसा सो जो चड़े तरंग।
खालसा सो जो करे नित जंग।

तुरंग कहते हैं घोड़े को। यहाँ गुरू जी श्वास रूपी घोड़े की बात करते हैं। एक तरफ निहंग सिंह भी घोड़े पर सवार होते हैं, वह प्रतीक की बात है। जो इन्द्रियाँ शरीर रूपी घोड़े को चलाती हैं जैसे कि पाँच प्राण, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ - मन, चित्त, बुद्धि व अहंभाव, पाँच विषय - शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि इन्हीं को नियन्त्रित कर लो। इसीलिए बार-बार विनती की जाती है कि अब यह मनुष्य रूप में तुम्हें अवसर मिल गया है इसलिए अब इसका सार्थक उपयोग कर लो और फिर ऐसा समय तुम्हें बार-बार नहीं मिल सकेगा -

चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी ॥
छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना ॥
झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना ॥ 1 ॥
अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै ॥
कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै ॥
अंग - 726

विचारें की गई हैं कि हमने नाम मार्ग पर किस प्रकार से चलना है। हमारा असली कार्य यही है और इसी मार्ग पर हमने आगे बढ़ते रहना है। जो हमें यह शरीर रूपी वाहन मिला है, इसका यही प्रयोजन है -

नानक तरवरु एकु फलु दुइ पंखेरु आहि ॥
आवत जात न दीसही ना पर पंखी ताहि ॥
अंग - 550

पंखी बिरख सुहावड़े उडहि चहु दिसि जाहि ॥
जेता उडहि दुख घणे नित दाझहि तै बिललाहि ॥
अंग - 66

वास्तव में तो हम आत्मिक शहजादे हैं और हमारे पास बहुमूल्य वस्तु पड़ी हुई है, लेकिन हमें उसकी समझ नहीं है। वैसे तो सभी जीवन-जन्तु आत्मिक शहजादे ही हैं क्योंकि -

नाम के धारे सगले जंत ॥
नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥ अंग - 284

सभी को नाम ने ही धारण किया हुआ है लेकिन वे इस चीज के योग्य ही नहीं हैं, इसके पात्र ही नहीं हैं कि वे नाम को अपने अन्दर प्रकट कर सकें। वे समस्त योनियाँ तो कर्म भोगने वाली योनियाँ ही हैं। अतः यह मनुष्य योनि ही इस परमावस्था तक पहुँचने में सक्षम है। हमें यह मनुष्य जन्म नाम-सिमरन के लिए ही प्राप्त हुआ है ताकि हम अपने अन्दर से नाम को प्रकट कर सकें लेकिन हम लोग भोगों के जीवन में पड़कर अपने जन्म को व्यर्थ में गंवा रहे हैं। इसलिए इस वास्तविक कार्य व युक्ति को पहचानो ताकि हमारा जन्म सार्थक हो सके।

वाहिगुरु जी का खालसा वाहिगुरु जी की फतहि।

नूरानी मिलाप - 13

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

(श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी के 550 वर्षीय प्रकाश शताब्दी को समर्पित)

मै मूरख की केतक बात है कोटि पराधी तरिआ रे॥
गुरु नानकु जिन सुणिआ पेखिआ से फिरि गरभासि न परिआ रे ॥ (अंग - 627)

प्यारे के प्यार की कद्र

श्री गुरू नानक देव जी विशुद्ध ईश्वरीय नूर - जय राम जी

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 38)

सच्चे सौदे के बाद, गुरू नानक देव जी के प्रति उनके पिता श्री कालू मेहता जी का जिस प्रकार का व्यवहार हो गया था, उससे राय बुलार जी बहुत अधिक चिन्तित हो गए थे। उन्होंने मेहता कालू जी को समझाया था कि आज के बाद मेरे अर्शी नूर, मेरे बाल नूर को कुछ भी मत कहना। वे जो चाहें करें जो चाहें न करें।

उन्होंने कहा कि जिस प्रकार की घटना अब हुई है, इस प्रकार की दोबारा नहीं होनी चाहिए। 'आगे समझ चलो नन्द लाला पाछै जो बीती सो बीती।' इस विचार को लेकर राए जी प्रत्येक समय गहरी सोच में रहते थे।

इसी विचार के कारण राए जी के मन में प्राय: संघर्ष चलता रहता था। आज अषाढ़ माह की तपिश दिन भर पड़ी और इसी बीच एक छोटी सी बदली (बादल) ने मौसम को खुशगवार कर दिया। अब ठंडी व मन्द गति से हवा बहने लग पड़ी। पलंग के ऊपर बिछी हुई चद्दर के ऊपर राए जी बिराजमान हैं और उधर मेहता कालू जी के दामाद श्री जय राम जी आपके पास पहुँच जाते हैं। राए जी ने श्री जय राम जी को चौकी पर बैठने की पेशकश की, फलस्वरूप आप चौकी पर सुशोभित हो गए।

'सत्य करतार' (अभिन्दन हेतु) कहने के बाद राए जी ने अपने मन के अन्दर चल रहे विचारों की कशमकश को जय राम जी के साथ शेयर करना शुरू किया। आपने कहा, जय राम जी! आपने इस घर में (मेहता कालू जी के घर में) रहते हुए क्या अनुभव किया? मेरे साईं जी (श्री नानक जी) के बारे में आपके क्या विचार हैं? मेरे बाल नूर के नूर को कोई दुख न पहुँचे, इस सम्बन्ध में आपके क्या विचार हैं? इस प्रकार की हृदय वेदना से भरे हुए प्रश्नों को सुनकर जय राम जी, राए बुलार की आन्तरिक मन: स्थिति को भली भांति समझ गए। अब जय राम जी कहने लगे, राए जी! भले ही हम लोग क्षत्रिय लोग हैं और माया की तरफ हमारा रुझान होना स्वाभाविक ही है लेकिन आपके सदृश्य ईश्वरीय रंग में सराबोर रूहों की संगत के फलस्वरूप मुझे नानक जी के लक्षण बहुत ही प्रकाशयुक्त प्रतीत होते हैं। यदि तृष्णा को छोड़कर और आत्म-देश के वासी बनकर हम देखें तो वे एक ईश्वरीय नूर हैं और केवल नूर ही नूर हैं। मैंने तो उनके घर में रहते हुए यह निश्चय कर लिया है कि (गुरू) नानक कोई आम इन्सान नहीं बल्कि परमात्मा स्वरूप परमात्मा के रंगों में रंगे हुए हैं। यह सुनकर राए जी के हृदय में भी प्रसन्नता की लहर दौड़ पड़ी कि मेरे प्यारे को, जय राम जी ने भी उसी प्रकार की भावना के सदृश्य समझा है, जिस प्रकार की भावना मेरी है। अत: इसके साथ मेरी दिली इच्छा खूब मेल खाती है। बिल्कुल ठीक समझा, आपने जय राम जी। इसके बाद बातचीत को आगे बढ़ाते हुए राय जी ने कहा, जय राम जी! क्यों न हम लोग कोई ऐसा उपाय ढूंढ़े जिसके फलस्वरूप खुदा के इस प्यारे नूर को कोई कठिनाई न झेलनी पड़े? जय राम जी ने सारी बात का सार निकालते हुए कहा राए जी! हम आपके विचार से बाहर नहीं हैं, जिस प्रकार से भी आपका विचार हो हम उसके साथ पूर्णत: सहमत हैं। राए जी ने इस प्रकार के सम्माननीय वचन सुनकर कहा, जय राम जी! हमने तो इस बात के लिए पूरा जोर लगाया कि मेहता कालू जी भविष्य में कोई इस प्रकार

की अवज्ञा न करें, जिस कारण से इलाही नूर को तकलीफ न पहुँचे लेकिन उनके मन की स्थिति ही ऐसी है कि वे इस बात पर विशेष ध्यान नहीं देते हैं और दूसरी बात यह है कि उनके ऊपर पुत्र भावना अधिक हावी है, जिस वजह से मेरे मन में यह शंका बनी रहती है कि सच्चे सौदे वाली घटना के बाद पुनः कोई अन्य उपद्रव खड़ा न हो जाए और फिर अब आगे के लिए इस प्रकार की घटना को सहन कर पाना भी कठिन है। मैं तो इसीलिए यह सोचता हूँ कि यदि (गुरू) नानक को घर से दूर कर दिया जाए तो अधिक अच्छा है। दूर जाकर वे चाहे कुछ करें या न करें और चाहे प्रत्येक समय परमात्मा के रंग में ही रंगे रहें, मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। मेरी तरफ से माया की उसे कोई कमी नहीं रहने दी जाएगी। बस, उन्हें कोई तकलीफ न पहुँचे।

यह सुनकर जय राम जी ने 'सत्य है जी', कहा। राए जी! आपने बिल्कुल सत्य बात कही है। यदि आपकी अनुमति हो तो मैं उसे अपने साथ सुल्तानपुर ले जाऊँ? इससे मेरी हार्दिक प्रसन्नता भी होगी और यह मेरी दिली इच्छा भी है। बहुत लम्बे समय से अपने अन्दर चल रही विकराल समस्या का समाधान निकलते देखकर राए जी ने पूरे हौंसले से इस बात की आज्ञा प्रदान कर दी और कहा, जय राम जी! मेरी भी इसी में खुशी है। आप नानक जी को अपने साथ ले जाओ। बस वे अपने रंग में मस्त रहें, बस यही मेरी भी दिली इच्छा है। दूसरी बात यह भी है कि बेटी नानकी जी ने भी उसे परमात्मा का नूर ही माना है। साथ ही आप भी उसे परमात्मा का नूर ही मानते हो इसलिए आप दोनों भी परमात्मा के रंगों में रंगे रहो और उस नूर को भी अपने रंग में रंगे रहने का अवसर प्रदान करो। वास्तविकता यह है कि संसारिक दृष्टि मोह के बन्धनों से घिरी हुई है माया-मोह भी बहुत बड़ा मोह है और इससे छुटकारा पाना भी कोई खाला जी का बाड़ा नहीं है। आपने और नानकी जी ने वास्तव में समझा है कि (गुरू) नानक पूर्ण पुरुष है।

बातचीत को विश्राम देते हुए जय राम जी बोले, राए जी! मेरे लिए तो वे नूर ही नूर हैं। इसके बाद राए जी पुनः कहने लगे, देखो जयराम जी! यहाँ पर एक डूम है जो कि मिरासी जाति से सम्बन्धित है। उसकी माँ की कोख से कई पुत्र पैदा हुए और काल का ग्रास बन गए। इसकी मृत्यु के भय के कारण वह स्वयं ही इसे मर जाना, मर जाना कहती रहती है ताकि इसे भी मृत्यु न ले जाए। जब (श्री गुरू) नानक जी की दृष्टि उसके ऊपर पड़ी तो उन्होंने उसे मरदाना कह कर उसके ऊपर कृपा दृष्टि कर दी। उन्होंने कहा यह तो मर्दों का मर्द, प्रधान मर्द है। अब यह कभी मरदा+ना यानि कि हमेशा के लिए अमर रहेगा। उसके राग को सुनकर हम भी बहुत आनन्दित होते हैं। (श्री गुरू) नानक जी के कंठ से जो भी शबद निकलता है, वह उसे साथ ही कंठस्थ कर लेता है और साईं जी (श्री नानक जी) को प्यार इतना करता है कि वह प्रत्येक समय उन्हीं के आस पास घूमता रहता है। साईं जी घर पर तो कम ही रुकते हैं लेकिन तीसरे पहर से पहले ही वे एकान्त में चले जाते हैं। सारे वृक्ष व वनस्पति उस नूर के रंग में रंग जाती है। जब वे किन्हीं अलौकिक रागों को अलापते हैं तो सारी कायनात ही राग मय हो जाती है। वे कौन से राग अलापते हैं, उनकी तो हमें ज्यादा समझ नहीं है लेकिन नानक जी उन्हें 'आसा' राग कहते हैं। 'आसा राग' में मस्त हुए जब आप अलाप छेड़ते हैं तो सारा वातावरण ही आनन्दित हो जाता है। कई हिन्दू, मुसलमान, साधू व फकीर आपके समक्ष नतमस्तक होते हैं। पण्डित, मौलाना, ज्योतिषविद्, काजी, वैद्य आदि जो भी उन्हें कुछ सिखाने के लिए आए वे उल्टा उनसे कुछ न कुछ सीख कर ही गए अर्थात वे खाली झोलियां लेकर आए और उन्हें भरकर लेकर गए। सभी उन्हें शीश झुका कर ही गए। मेरे राज्य में एक अमृत-फल का पौधा उगा है, मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि यह अमृत फल दसों दिशाओं में फैले। इसकी खुशबू सारे वातावरण को सुगन्धित कर दे। इसके साथ ही इस अमृत के पौधे को सांसारिक माया की दृष्टि से भी कभी कोई दुख न पहुँचे। सारी विचार को ध्यानपूर्वक श्रवण करने के बाद जय राम जी ने निर्णय लिया कि ठीक है, मैं इस इलाही नूर को अपने साथ लेकर जाऊँगा। मैं पिता जी को भी समझाऊँगा कि (गुरू) नानक के लिए सुल्तानपुर में आजीविका का सारा प्रबन्ध मेरे जिम्मे है। मैं अपने नवाब को भी निवेदन करूँगा ताकि वे किसी ठीक-ठाक रोजगार पर इसे लगवा दें। राए जी ने समस्या का हल निकलता देखकर कहा कि यदि आवश्यकता हो तो हमारी तरफ से भी कह देना कि राए जी की भी यही इच्छा है।

अब इस प्रकार के विचार लेकर जय राम जी घर आ गए और घर आकर पिता जी के साथ इस सम्बन्ध में विचार की। सच्चे सोदै वाला मामला अभी ताजा ही था। पिता जी

(शेष पृष्ठ 55 पर)

भाई नन्द लाल जी
गजलें

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 40)

अज खुद-नमाईए तू खुदा हसत दूर तर
बीनी दरुनि खेश शवी अज खुदी खलास।

तुम्हारे हउमै के दिखावे से परमात्मा कोसों दूर है, यदि तुम अपने अन्दर झांक कर देखोगे तो फिर हउमै से रहित हो जाओगे।

गोया तू दसति खुदा रा अज हिरस कोताह कुन
ता अंदरुनि खाना बीनी खुदाइ खास।

हे गोया! तुम अपना हाथ लालच से पीछे खींच लो ताकि तुम अपने घर के अन्दर ही उस महान परमात्मा को देख सको।

जि फैजि मकदमत अै नौ-बहारि गुलशनि हुसन
जहाँ चूं बागि इरम करदाई जहे फिआज।

हे रूप जमाल के बाग की नई बहार! अपने आने की कृपा से तुमने इस संसार को स्वर्ग के बाग की भांति बना डाला है। कितना अच्छा है इस अनुकम्पा को करने वाला।

चिरा बहालति गोया नजर नमी फिगनी
कि यक निगाहि तू हासिलि मुरादि अहिलि इगराज।

तुम गोया की बुरी दशा की तरफ एक नजर क्यों नहीं करते हो? इसका कारण यह है कि जरूरतमन्द लोगों के लिए तुम्हारी एकदृष्टि ही मनोकामनाओं को पूरी करने वाली है।

बसकि मा रा हसत बा तो इरतबात
अज कदूमि तुसत दर आलम निशात।

तुम्हारे साथ हमारा बहुत ही सगा सम्बन्ध है और तुम्हारे आगमन से ही सारे संसार में खुशी का वातावरण है।

फरश करदम दर कदूमि राहि तू
दीदा ओ दिल रा कि बूदा दर-बसात।

मैंने अपने खिले हुए दिल तथा खुले हुए नेत्रों को तुम्हारे आगमन मार्ग पर बिछा दिया है।

बर फकीरानि खुदा रहिमे बकुन
ता दरीं दुनिआ ब-याबी इंबसात।

तुम परमात्मा के फकीरों पर कृपा करो ताकि इस संसार में तुम्हें खुशी प्राप्त हो सके।

नीसत आसूदा कसे दर जेरि चरख।
बिगुजर अै गोया अजीं कुहना रुबात।

इस आसमान के नीचे कोई भी आनन्द और खुशहाल नहीं है, अतः हे गोया! तुम इस पुरानी सराय में से गुजर जाओ।

यादि उ कुन यादि उ गोया मुदाम
ता बयाबी अज गमि आलम फराग।

हो गोया! तुम सदैव उसका सिमरन करो ताकि यह सारा संसार सभी प्रकार के दुखों से मुक्त हो जाए।

गर जि राहि शोक साजी सीना साफ
जूद बीनी खेशतन रा बे गुजाफ।

यदि तुम शौक सहित अपने मन को साफ कर लो तो बिना किसी अतिश्योक्ति के तुम जल्दी ही अपने निजत्व को प्राप्त कर लोगे।

अज खुदी तू दूर गशता चूं खुदा
दूर कुन खुद-बीनी ओ बीं बे-गिलाफ।

तुम हउमै के कारण ही परमात्मा से दूर हुए हो, मनमति को दूर कर दो और परमात्मा के प्रत्यक्ष दर्शन कर लो।

बिगुजर अज लूजति ईं खमसा हवास
ता बयाबी बजते अज जामि साफ।

इन पाँच इन्द्रियों के स्वाद का तुम त्याग कर दो ताकि तुम्हें उस दिव्य प्याले का स्वाद प्राप्त हो सके।

गर बजोई राहि मुरशद रा मुदाम
ता शवी गोया मुबरा अज खिलाफ।

गोया तुम हमेशा पूरे सतगुरू की राह को ढूँढ़ते रहो ताकि तुम संसार की दुविधा से मुक्त हो सको।

रबूद मकदमि वसलश जि मन इनानि फिराक
दिहेम ता बुकजा शरहा दासतानि फिराक।

उसके मिलाप के आगमन के कारण मेरे हाथ से विरह की बागडोर छूट गई है अतः अब हम कहाँ तक इस विरह

की व्यथा को सुनाते रहें?

हनूज हिजर निआलूदा बूद वसलि तुरा
शनीदाएम सुखनि वसल अज जबानि फिराक।

अभी बिछोड़े ने तुम्हारे मिलाप को स्पर्श नहीं किया था और हमने उस बिछोड़े के माध्यम से ही मिलाप की बातों को सुना था।

चुनाँ जि हिजरत आतिश फितादा दर दिलि मन
कि बरकि नालाइ मन सोखत खानमानि फिराक।

तुम्हारे बिछोड़े के कारण मेरे दिल को ऐसी आग लगी जिसने कि विछोड़े रूपी घर को जलाकर राख कर दिया।

चि करदा-सत फिराकि तू बर सरि गोया
कि दर शुमार निआइद मरा बिआनि फिराक।

तुम्हारे बिछोड़े ने गोया के साथ कैसा व्यवहार किया है, यह व्यथा किसी भी हिसाब किताब में नहीं आती है।

आँ जहे दम कु बयादश बिगुजरद
सर हमा खुश कू रवद दर कारि इशक।

वही श्वास सौभाग्यशाली है, जो उसकी याद में व्यतीत हो जाए और वही दिमाग भाग्यशाली है जो प्रेम-मार्ग का पथिक बन जाए।

सद हजाराँ जाँ ब-कफ दर राहि उ
ईसतादा तकीआ बर दीवारि इशक।

हजारों ही प्रेमीजन अपनी हथेली पर जान को रखकर, उसके मार्ग पर, प्रेम की दीवार से पीठ लगाकर खड़े हुए हैं।

अै जहे दिल कू जि इशकि ह्क पुर असत
खम शुदा पुशति फलक अज बारि इशक।

वह दिल सौभाग्यशाली है जो परमात्मा के प्रेम के साथ भरा पड़ा है, प्रेम के भार से ही आसमान की पीठ झुक गई है।

जिंदा मानी दाइमा अै नेक खू
बिशनवी गर जमजमा अज तारि इशक।

यदि तुम प्रेम की सितार में से निकले हुए रागों को सुन लो तो फिर नेक स्वभाव वाले ऐ व्यक्ति! तुम हमेशा के लिए अमर हो जाओ।

बादशाहाँ सलतनत बिगुजाशतंद
ता शवंद आँ महिरमि असरारि इशक।

बादशाहों ने राजभाग छोड़ दिए ताकि वे प्रेम के रहस्यों से वाकिफ हो सकें।

मरहमे जुज बंदगी दीगर न दीद
हमचू गोया हर कि सुद बीमारि इशक।

गोया की भांति जिसे भी प्रेम की बीमारी लगी, परमात्मा की बन्दगी के बिना उसने अन्य कोई भी मरहम नहीं देखी।

ता आफरीदा असत मरा आँ खुदाइ पाक
जुज हरफि नामि ह्क निआइद जि जिसमि जक।

उस पाक परवरदिगार ने मुझे इसलिए पैदा किया है ताकि मिट्टी के इस शरीर मे से परमात्मा के नाम के बिना अन्य कुछ भी न निकले।

दर हिजरि तुसत जानो दिलि आशकाँ चुनीं
चं लाला दाग बर जिगरो सीना चाक चाक।

तुम्हारी जुदाई में प्रीतिवानों के साथ तथा दिल की यह दशा है कि पोस्त के फूल की भांति उनका जिगर दागदार है तथा सीना छलनी।

ईं गुफता असत मरग कि बे-यादि ह्क बवद
चूं साइआ तू हसत नदारेम हीच बाक।

परमात्मा की याद के बिना वाले समय को मृत्यु कहा गया है और जब तक हमें आपकी छत्रछाया प्राप्त है, तब तक हमें कोई भय नहीं है।

तखतो नगीं गुजाशता शाहाँ ज बहिरे तू
बिकुशा जि रुख नकाब कि आलम शुदा हलाक।

तुम्हारे लिए बादशाहों ने तख्त तथा राजभाग छोड़ दिए हैं। तुम अपने मुख पर से बुर्का उठाओ क्योंकि सारा संसार ही मरा पड़ा है।

अै खाकि दरगहि तू शफा-बखशि आलम असत
रहिमे बिकुन बहालि गरीबानि दरदनाक।

ऐ कि तेरी दरगाह की धूल संसार को स्वास्थ्य प्रदान करने वाली है, तुम दर्द के मारे परदेसियों के हाल पर तरस खाओ।

दुनिआ-सत काँ खराब कुनि हर दो आलम असत
दारा बखाक रफता ओ कारुं शुदा हलाक।

यह दुनिया ही है जो कि दोनों संसारों को बरबाद कर देती है दारा भी मिट्टी में मिल गया और कारूँ भी मारा गया।

'चलता'

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार निजी जीवन जीने का ढंग

(प्रथम प्रकाश दिवस श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी - 31 अगस्त, 2019)

डा. जगजीत सिंह

सिक्खी एक जीवन जीने की कला है और यह जीवन जीने की कला श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी सिखाती है। इस ब्रह्मांड में मनुष्य को हस्ती क्या स्थान रखती है? उसका जीवन लक्ष्य क्या है? उसका निजी जीवन कैसा हो जो कि उसे सुख, शान्ति और आनन्द प्रदान करे? उसका खाना, पीना, पहनना, शिक्षा, कारोबार, व्यवहार उसके पारिवारिक सम्बन्ध, माता-पिता, बहन-भाई, पति-पत्नी, पुत्र-पुत्रियों के साथ कैसे हों ताकि जीवन सन्तुलित रहे और वह दुखों का कारण न बने बल्कि सुख-शान्ति, सहज व उल्लास का वातावरण बना रहे। उसके भाईचारे से सम्बन्धित तथा सामाजिक रिश्ते-नाते किस प्रकार से सुखमय व सुहावने रह सकते हैं? उसकी अपने देश व सारे संसार के प्रति किस प्रकार की निष्ठा होनी चाहिए? दरअस्ल उसका सारा जीवन यानि कि व्यक्तिगत और सामाजिक इस प्रकार का सन्तुलित, विनम्र और परोपकारी होना चाहिए जो कि सारी मानवता के लिए अत्युत्तम उदाहरण बन सके। ऐसे व्यक्ति का सृजन ही श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी का उद्देश्य है।

ऐसे उत्तम जीवन का, 250 वर्ष के लम्बे समय में पहले दस गुरुओं ने अपनी निजी देखरेख में सृजन किया और फिर सदा के लिए उसे कायम रखने के लिए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की अगुवाई प्रदान की।

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का पहला आधारभूत उपदेश एक परमात्मा में पूर्ण विश्वास है, जिसका स्वरूप मूल मन्त्र में इस प्रकार वर्णन किया गया है -

ੴ सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि।

अर्थात परमात्मा एक है, सारे ब्रह्मांड का कर्ता है तथा अपनी प्रत्येक रचना में विचरण कर रहा है। वह भय रहित है, विरोध रहित है, काल रहित है, जन्म-मरण रहित है और अपने आप से ही प्रकाशमान है, गुरू रूप है, अज्ञानता का विनाशकारी है तथा कृपा स्वरूप है यानि कि वह गुरू रूप होकर, प्रत्येक जीव पर कृपा करके उसे ज्ञान प्रदान करता है, एवं वह गुरु के अन्दर विद्यमान होकर अपने स्वरूप का साक्षात्कार करवाता है।

मनुष्य को एक अकालपुरुष या एक वाहिगुरू का सिमरन करने व उसका निध्यासन करने की प्रेरणा है। सिक्खी के अन्दर एक के बिना किसी अन्य देवी देवताओं, प्राकृतिक शक्तियों, मूर्तियों, कब्रों आदि की पूजा, उनके भय तथा बन्धनों से मुक्त करके सच्चिदानन्द शक्ति के साथ जोड़ दिया गया है और इस मनोवैज्ञानिक सत्य को दृढ़ करवा दिया गया है कि -

जैसा सेवै तैसो होइ॥ ***अंग - 223***

अर्थात मनुष्य जिस प्रकार के इष्ट की आराधना करता है वह उसी स्वरूप में ढल जाता है। एक की आराधना, मनुष्य की वृत्ति को खण्ड-खण्ड होने या विभाजित होने से रोककर एक के साथ ही सम्बद्ध कर देती है। यह आराधना मनुष्य को झूठ व पाखण्ड से मुक्त करके सच्चे नाम के माध्यम से सत्य के साथ जोड़ देती है, सच्चे मनुष्य का निर्माण करती है तथा उसे करतार के गुण प्रदान करती है, निर्भय तथा निरवैर अवस्था प्रदान करती है जो कि मनुष्य के चरित्र की सर्वोत्तम पद्धतियाँ हैं।

'अकाल' की आराधना मनुष्य के अन्दर यह सच्चाई प्रकट करती है कि वह काल रहित है, मरने वाला नहीं है, योनि रहित है क्योंकि वह शरीर नहीं बल्कि आत्मा है। शरीर तो उसका बाह्य स्वरूप है, बाहरी आवरण है जो कर्मों के अनुसार प्राप्त होता है। ऐसा परमात्मा कृपावान है, दयावान है। कृपा का स्वरूप है, मनुष्य के ऊपर उसकी प्रतिक्षण कृपा हो रही है। केवल उसे पहचानने की जरूरत है, जिसके माध्यम से उसका नाम है। नाम उसकी याद है और उसका सिमरन उसे अन्दर बसाना है। अपने वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार ही उसके जीवन का लक्ष्य है जिसे कि बहुत ही स्पष्ट शब्दों में गुरवाणी दर्शाती है -

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥ ***अंग - 12***

ऐसे आदर्श की प्राप्ति के लिए मनुष्य ने क्रियाशील होना है। गुरू तथा गुरवाणी हमें यह समझ प्रदान करते हैं

कि बहुत लम्बा अर्सा अनेकों योनियों में भ्रमण करने के बाद यह मनुष्य जन्म प्राप्त होता है। जिस समय मनुष्य मन, बुद्धि व चेतनता के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करके गुरू की शरण में जाता है, तब उसे अपने जीवन का प्रयोजन समझ में आता है। गुरवाणी हमें यह समझ प्रदान करती है कि मनुष्य, पशु की अपेक्षा चेतनता के तौर पर श्रेष्ठ है, विकसित बुद्धि के तौर पर श्रेष्ठ है लेकिन जो मनुष्य केवल खाने, पीने व पहनने की सेवाओं में तथा धन पदार्थों के लालच में ही जीवन व्यतीत कर देता है, वह पशुओं से श्रेष्ठ कैसे हो सकता है? गुरू जी का फुरमान है -

अनिक रसा खाए जैसे ढोर ॥
मोह की जेवरी बाधिओ चोर ॥ 1 ॥
मिरतक देह साधसंग बिहूना ॥
आवत जात जोनी दुख खीना ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
अनिक बसत्र सुंदर पहिराइआ ॥
जिउ डरना खेत माहि डराइआ ॥ 2 ॥
सगल सरीर आवत सभ काम ॥
निहफल मानुखु जपै नही नाम ॥ 3 ॥ अंग - 190

इन्सान, संसार के अन्दर आता तो मनुष्य रूप में है लेकिन परमात्मा के ज्ञान के बिना वह पशुतुल्य ही है -

आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर ॥
नानक गुरमुखि सो बुझै जा कै भाग मथोर ॥
अंग - 251

मनुष्य के दुखों का कारण परमात्मा से बिछोड़ा है और बिछोड़े का कारण हउमै है। हउमै के अधीन स्वार्थ में बँधा हुआ मनुष्य जन्म मरण के चक्रव्यूह में ही फँसा रहता है।

हउमै परमात्मा के हुक्मानुसार ही है। हउमै के अधीन होने के कारण ही यह मनुष्य द्वैत भावना में कर्म करता है और हमारे कर्म ही हमें विभिन्न चक्रों में डालकर घुमाते रहते हैं, इसीलिए गुरवाणी में इस हउमै को दीर्घ रोग कहा गया है। गुरवाणी का फुरमान है -

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि ॥
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि ॥
अंग - 466

हउमै के कारण ही मनुष्य परमात्मा से अलग होता है और हउमै के कारण ही धन-पदार्थों की दृष्टि को धारण किए रहता है, जिस वजह से वह न तो सच्चाई को देखता ही है और न ही सच्चाई को सुनता ही है। गुरवाणी का निर्णय है-

माइआधारी अति अंना बोला ॥
सबदु न सुणई बहु रोल घचोला ॥ अंग - 313

सत्य की समझ, शब्द के द्वारा होती है और हउमै से मुक्ति भी शब्द के द्वारा ही होती है। हउमै के द्वारा एकत्र हुई मन व बुद्धि की मैल को धोने का साधन भी शब्द या नाम ही है -

भरीऐ मति पापा कै संगि ॥
ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥ अंग - 4

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी का मुख्य ध्येय मन की मति के पीछे चलने वाले हउमैवादी मनुष्य को गुरू की मति के पीछे चलने वाला अथवा गुरु की मति ग्रहण करने वाला गुरुमुख बनाना है जो कि माया के बन्धनों से मुक्त होकर, नाम अमृत की कृपा प्राप्त करके, मुक्ति की अवस्था को प्राप्त होता है। फुरमान है -

गुरमुखि मुकतो बंधु न पाइ ॥
सबदु बीचारि छुटै हरि नाइ ॥ अंग - 152

गुरमुख का दैनिक जीवन किस प्रकार का होता है, इस सम्बन्ध में केवल दो शब्दों का हवाला ही पर्याप्त है -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ अंग - 305

करि इसनानु सिमरि प्रभु अपना
मन तन भए अरोगा॥
कोटि बिघन लाथे प्रभ सरणा प्रगटे भले संजोगा ॥
अंग - 611

इन शबदों में गुरुमुख के ब्रह्म मुहुर्त के स्नान, नाम-अभ्यास, गुरवाणी के पाठ, अध्ययन, गायन, सारा दिन, उठते-बैठते उसकी याद में विचरण करने का उपदेश है। इस प्रकार की दिनचर्या के द्वारा वह, दीर्घ रोग तथा माया के बन्धनों से भी सहजता पूर्वक मुक्त हो जाता है तथा हमेशा सुख, शान्ति व उल्लास की अवस्था में विचरण करने लगता है। ऐसी अवस्था वाला व्यक्ति हमेशा ईश्वरीय प्रेम में सराबोर रहता है। गुरू का प्रेम व सान्निध्य उसे मानो मनुष्य से देव तुल्य बना देता है।

अब उसकी दृष्टि में सारी मानवता एक परमात्मा की रचना ही प्रतीत होती है यानि कि अब उसे 'सभना जीआ का इक दाता' प्रतीत होने लगता है साथ ही उसकी अवस्था 'ना को वैरी नाही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई' की तरह से निरवैर वाली हो जाती है। उसके अन्दर से रंग,

रूप, जाति-पात, ऊंच-नीच, राजा-रंक आदि सारे भेद समाप्त हो जाते हैं। अब उसे केवल मनुष्यों के अन्दर ही नहीं बल्कि सारे पशु-पक्षियों, जीव-जन्तुओं व सारी कायनात में परमात्मा की छवि ही प्रतीत होने लग पड़ती है। गुरवाणी के आन्तरिक भाव अब उसके जीवन में घटित होने शुरू हो जाते हैं, फलस्वरूप अब वह सारे ब्रह्मांड में एक परमात्मा का ही अक्स देखता है। अतः गुरवाणी इस प्रकार की दृष्टि प्रदान कर देती है -

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई ॥
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई
नदरी हरि निहालिआ ॥
एहु विसु संसारु तुम देखदे
एहु हरि का रुपु है हरि रुपु नदरी आइआ ॥

अंग - 922

इस प्रकार की सर्वोच्च दृष्टि वाली गुरुमुख शख्सियत सारी मानवता को प्यार के आलिंगन में ले लेती है और जो घृणा, निन्दा, वैर व विरोध से मुक्त होकर परोपकार के कार्य करती है। ऐसी शख्सियत दीन दुखियों की मदद करके, उसमें से उत्साह व उल्लास को प्राप्त करती है अर्थात वह सच्ची व सुच्ची जीविकोपार्जन करके जरूरतमन्दों की मदद करती है। 'घालि खाइ किछु हथहु देइ' का सिद्धान्त उसके जीवन में सहज स्वभाव ही चलता जाता है।

'हम नहीं चंगे बुरा नही कोई' तथा बुरे का भी भला माँगना एवं स्त्री जाति को महापुरुषों व राजाओं-महाराजाओं की जननी जानते हुए उसका सम्मान करना, उसके जीवन का लक्ष्य बन जाता है। वह परिवार या संसार का त्याग करके परमात्मा की तलाश हेतु जंगलों में नहीं जाता क्योंकि गुरवाणी उसे आदेश करती है कि -

काहे रे बन खोजन जाई ॥
सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥

अंग - 684

सरीरहु भालणि को बाहरि जाए ॥
नामु न लहै बहुतु वेगारि दुखु पाए ॥ *अंग - 124*

गुरवाणी केवल मार्ग दर्शन करती है वह बन्धनों में नहीं डालती है। व्यक्तिगत जीवन में क्या खाना है, क्या पहनना है, किस प्रकार का व्यवहार करना है आदि के बारे में गुरवाणी के अन्दर सार्वभौमिक व सर्वकालिक नियम बतलाए गए हैं कि इस प्रकार का भोजन खाना चाहिए, इस प्रकार की पोशाक पहननी चाहिए, इस प्रकार की सवारी का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि न तो शरीर को तकलीफ हो और न ही मन में विकार उत्पन्न हों -

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥ जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ रता पैनणु मनु रता सुपेदी सतु दानु ॥ नीली सिआही कदा करणी पहिरणु पैर धिआनु ॥ कमरबंदु संतोख का धनु जोबनु तेरा नामु ॥ 2 ॥ बाबा होरु पैनणु खुसी खुआरु ॥ जितु पैधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ 1 ॥ रहाउ॥ घोड़े पाखर सुइने साखति बूझणु तेरी वाट ॥ तरकस तीर कमाण साँग तेगबंद गुण धातु ॥ वाजा नेजा पति सिउ परगटु करमु तेरा मेरी जाति ॥ 3 ॥ बाबा होरु चड़णा खुसी खुआरु ॥ जितु चड़िऐ तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ घर मंदर खुसी नाम की नदरि तेरी परवारु ॥ हुकमु सोई तुधु भावसी होरु आखणु बहुतु अपारु ॥ नानक सचा पातिसाहु पूछि न करे बीचारु ॥ 4 ॥ बाबा होरु सउणा खुसी खुआरु ॥ जितु सुतै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ 1 ॥ रहाउ ॥ 4 ॥ 7 ॥ *अंग - 16*

सन्तोष युक्त जीवन को श्रेयस्कर जीवन बतलाया गया है क्योंकि सन्तोषी जीवन ही परोपकार वाला और सेवा भाव वाला जीवन होता है -

सेव कीती संतोखीईं जिनी सचो सचु धिआइआ ॥
ओनी मंदै पैरु न रखिओ करि सुक्रितु धरमु कमाइआ॥
ओनी दुनीआ तोड़े बंधना अंनु पाणी थोड़ा खाइआ॥
तूं बखसीसी अगला नित देवहि चड़हि सवाइआ ॥
वडिआई वडा पाइआ ॥ *अंग - 467*

गुरवाणी साफ-सुथरा व आनन्दमयी जीवन जीने की कला सिखलाती है, जहाँ पर कि कोई वैर-विरोध नहीं, डर की भावना नहीं होती है। इस प्रकार के जीवन वाला मनुष्य दुखों, रोगों, संतापों व शंकाओं से मुक्त होता है। यही नहीं अपितु वह प्रत्येक प्रकार के बन्धनों से मुक्त होकर, प्रभु-प्रेम में विलीन हो जाता है, फलस्वरूप वह जीवन मुक्त की अवस्था को प्राप्त हो जाता है -

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति ॥
हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ
विचे होवै मुकति ॥ *अंग - 522*

ईश्वर अमोलक लाल

रचना: सन्त ईशर सिंह जी - राड़ा साहिब

1. मानस जनमु दुलंभ है

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥ गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥ मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ 1 ॥ ***अंग - 12***

मानस देह बहुरि नह पावै कछू उपाउ मुकति का करु रे ॥ ***अंग - 220***

कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारै बार ॥
जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार ॥ 30 ॥ ***अंग - 1366***

अब की बार बखसि बंदे कउ बहुरि न भउजलि फेरा ॥ 3 ॥ 7 ॥ ***अंग - 1104***

कबीर जा तूं आइआ जगत मैं जग हसे तूं रोए।
पर - अैसी करनी कर चलो पिआरे तूं ह्सें जग रोए।

ੴ सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरप्रसादि ॥
॥ जपु ॥
आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ 1 ॥ ***अंग - 1***

06-08-1965

कल 06-08-1965 था, फलस्वरूप इस नाशवान व परिवर्तनशील के दुख रूप शरीर का 58 वां वर्ष समाप्त होकर 59वां वर्ष शुरू हो गया है लेकिन मेरा (जो कि आत्मा हूँ) न तो जन्म है और न ही मरण है और न ही कोई उम्र है।

मैं जब तक अज्ञानता के कारण स्वयं को आत्मा की बजाए शरीर मानता रहा, तब तक मन अशान्त व दुखी रहा और तब तक स्वयं को जन्म मरण में आने वाला ही समझता रहा लेकिन जब गुरू जी की कृपा द्वारा अपने वास्तविक स्वरूप को जान लिया तो उसी समय से शरीर के सारे धर्मों से पृथक और परमानन्द, जन्म मरण से रहित जान कर इस नाशवान शरीर से ऊँचा-ऊँचा विचरण करता आ रहा हूँ। यथा-

जनम मरन है देह को, भूख पिआस है प्राण।
तूं साखी सहिजे अचुल, शक ना इसमें मान।

इसलिए उम्र तो जिस्म (शरीर) की ही न कि आत्मा की।

शाँती और विखेपता, दोनों मन के धरम।
तूं साखी सहिजे अचुल, इसमें नाहीं भरम।

इसलिए शान्ति और अशान्ति तो दोनों ही मन के स्वभाव हैं। आत्मा तो दोनों का दृष्टा है। जैसे कि एक कागज पर दो चित्र हैं एक खड़े घोड़े का चित्र है जबकि दूसरा दौड़ते हुए घोड़े का। लेकिन कागज तो दोनों का ही साक्षी है। इसी प्रकार से आत्मा तो सदैव ही अचल है। एकाग्रता और विषशेपता तो दोनों ही मन के स्वभाव हैं जबकि अपना निजत्व है - आत्मा। आत्मा का स्वरूप ही निर्विकल्प और समाधि स्वरूप है तथा शरीर से पृथक है।

2) परम पुरुषार्थ

मनुष्य शरीर में आकर जीवात्मा को सेवा, भक्ति और ज्ञान द्वारा अपने निजत्व की पहचान करके और आत्म साक्षात्कार करके परम सुखी होने का सुनहरी अवसर है। शरीर के रहते हुए ही जीवन मुक्ति का आनन्द लेना और अन्य पात्र लोगों को आत्मा की समझ प्रदान करना तथा शरीर की आयु पूरी होने के बाद सदा के लिए विदेह मुक्त अवस्था में स्थित हो जाना ही परम पुरुषार्थ है।

शरीर, माता-पिता के रक्त और वीर्य के माध्यम से पहले माता के पेट में आता है फिर उसका जन्म, फिर बचपन, फिर युवावस्था और बुढ़ापा आदि अवस्थाओं को बदलता हुआ आत्मा में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, जबकि आत्मा निराकार होने के कारण इनका दृष्टा है। वह इन समस्त अवस्थाओं का दृष्टा होकर सारे खेल को देखता रहता है तथा शरीर की आयु पूरी होने पर इसे छोड़कर यूँ परे हो जाता है जैसे कि साँप अपनी केंचुल को छोड़कर परे हो जाता है तथा फिर वह उसकी तरफ देखता भी नहीं है।

देह आत्मा का सम्बन्ध तो ऐसा है जैसा कि मकान और मकान मालिक का होता है या फिर जैसे घोड़े और खुड़सवार का होता है। सवार को घोड़ा कुछ समय के लिए मालिक के द्वारा किसी विशेष कार्य को पूरा करने के लिए उपलब्ध करवाया गया है और फिर नियत समय पर उससे वह घोड़ा वापिस ले लिया जाएगा। इसी प्रकार से जीवात्मा रूपी सवार को शरीर रूपी घोड़ा कुछ समय के लिए ही प्राप्त हुआ है जिसे कि वाहिगुरू रूपी मालिक आयु पूरी होने पर वापिस ले लेगा। इससे पहले ही प्रभु प्राप्ति रूपी कार्य हमें ले लेना चाहिए। प्रभु प्राप्ति ही वह असली कार्य है जो कि जीवात्मा ने इस शरीर से लेना है। इस कार्य को गुरू कृपा और साधु संगत की कृपा के द्वारा सेवा, भक्ति तथा ज्ञान के माध्यम से सम्पन्न किया जा सकता है। प्राचीन समय में यह कार्य तपस्या और योगाभ्यास के द्वारा किया जाता था लेकिन आजकल के समय में शारीरिक शक्ति और आयु कम होने के कारण ही सेवा को तपस्या के स्थान पर तथा भक्ति मार्ग को प्राणायाम (योगाभ्यास) के स्थान पर जगह दी गई है। मन की शुद्धि और मन की एकाग्रता के माध्यम से ब्रह्मज्ञान तथा ब्रह्मज्ञान के द्वारा प्रभु प्राप्ति हो पाती है।

वकते गुजरान मिहर गुजर जाता है, इनसान आता है ओर आ के मर जाता है।
है जिंदा जावेद और नेकअंजाम, जो आ के कोई काम भी कर जाता है।

प्रश्न - वह कार्य कौन सा है?

उत्तर - गुरू कृपा के द्वारा स्वयं को आत्म स्वरूप जानकर उसमें प्रत्येक समय अपने मन को बाँधकर रखना है और परमानन्द में आयु को व्यतीत करके जीवन मुक्त होना है।

1. वकते गुजरान - मुश्किल समय

2. मिहर - कवि महोदय का उपनाम

3. जावेद - शाश्वत (हमेशा रहने वाला)

4. नेक अंजाम - अच्छा अन्त

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की सम्पादन कला

(श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का प्रकाशोत्सव - 31 अगस्त 2019)

डा. सुरिन्दर सिंह कोहली

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी को दशम ग्रन्थ से पृथक रखने के लिए आदि ग्रन्थ का नाम दिया गया। गुरू पदवी मिलने से पहले श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का 'आदि ग्रन्थ' कहा जाता था। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी को तैयार करने में सिक्खों के पाँचवें गुरू, श्री गुरू अरजन देव जी का मनोरथ गुरमति की विचार-प्रणाली को एक प्रमाणित रूप प्रदान करना था। उन्होंने इस महान गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर ने केवल सिक्ख गुरुओं की वाणी को ही शामिल किया वरन कई पहले हो चुके तथा समकालीन भक्तों व सन्त कवियों की वाणी को भी शामिल किया। उनकी उपस्थिति में जो बीड़ तैयार की गई उसे करतारपुर वाली बीड़ कहा जाता है क्योंकि यह बीड़ करतारपुर के सोढी धीरमल के कब्जे में आने के बाद उनके परिवार के पास ही रही। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी ने जब धीरमल से करतारपुर वाली बीड़ मंगवाई तो उसने इनकार कर दिया फलस्वरूप दमदमा साहिब में उन्होंने एक और बीड़ तैयार करवाई तो इसमें श्री गुरू तेग बहादर जी की वाणी को भी शामिल किया गया। इस बीड़ को 'दमदमा साहिब वाली बीड़' कहा जाता है। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी के हुक्मानुसार इस बीड़ अथवा ग्रन्थ साहिब जी को गुरू पदवी प्राप्त हुई।

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी में शामिल हुई रचना का ब्यौरा इस प्रकार है -

1) जैदेव (भक्त) वारहवीं सदी - दो शबद

2) शेख फरीद - बारहवीं - चार शबद तथा एक सौ बारह श्लोक

3) नामदेव (भक्त) तेरहवीं सदी - 60 शबद

4) त्रिलोचन (भक्त) तेरहवीं सदी - 4 शबद

5) परमानन्द (भक्त) तेरहवीं सदी - 1 शबद

6) सधना (भक्त) - एक शबद

7) बेणी (भक्त) - तीन शबद

8) रामानन्द (भक्त) - चौदहवीं तथा पन्द्रहवीं शताव्दी - एक शबद

9) धन्ना (भक्त) - पन्द्रहवीं सदी - चार शबद

10) पीपा (भक्त) - पन्द्रहवीं सदी - एक शबद

11) सैण (भक्त) - पन्द्रहवीं सदी - एक शबद

12) कबीर (भक्त) - पन्द्रहवीं सदी - 292 शबद (बाबन अखरी, थिती तथा वार की सात पउड़ियां समेत) तथा 249 श्लोक

13) रविदास (भक्त) - पन्द्रहवीं सदी - 41 शबद

14) श्री गुरू नानक देव जी (1469-1538) - 974 शबद तथा श्लोक

15) श्री गुरू अंगद देव जी (1504-1553) - 62 श्लोक

16) श्री गुरू अमरदास जी (1479-1574) - 907 शबद, श्लोक तथा पउड़ियाँ

17) श्री गुरू रामदास जी (1534-1581) - 2218 शबद, श्लोक तथा पउड़ियां

18) श्री गुरू अरजन देव जी (1563-1606) - 2218 शबद, श्लोक तथा पउड़ियां

19) श्री गुरू तेग बहादर जी (1622-1675) - 59 शबद तथा 57 श्लोक

20) भक्त भीखन जी (सूफी) - हुमायूँ तथा अकबर के समय - दो शबद

21) भक्त सूरदास जी - अकबर का समकालीन यह सूर सागर वाला सूरदास नहीं - दो शबद

22) श्री सुन्दर जी (गुरू अमरदास जी का पौत्र) एक 'सद' जिसकी 6 पउड़ियाँ हैं।

23) भाई मरदाना जी, गुरू नानक देव जी का रवाबी - तीन श्लोक

24) कल (भट्ट) 46 सवैये तथा तीन सोरठे

25) कलसहार (भट्ट) 46 सवैये तथा तीन सोरठे

26) टल (भट्ट) - 4 सवैये

27) जालप (भट्ट) - 1 सवैया

28) जल (भट्ट) - 1 सवैया

29) कीरत (भट्ट) - 8 सवैये

30) सल (भट्ट) - 3 सवैये

31) भल (भट्ट) - 6 सवैये

32) नल (भट्ट) - 6 सवैये

33) भिखा (भट्ट) - 2 सवैये

34) जलन (भट्ट) - 1 सवैया

35) दास (भट्ट) - 7 सवैये, तीन रड तथा चार झूलणे

36) गयन्द (भट्ट) - 5 सवैये

37) सेवक (भट्ट) - 7 सवैये

38) मथुरा (भट्ट) - 10 सवैये

39) बल (भट्ट) - 5 सवैये

40) हरिबंस (भट्ट) - 2 सवैये

41) सत्ता (डूम) - सते बलवंड की वार में 5 पउड़ियाँ

42) बलवंड (जूम) - सते बलवंड की वार में तीन पउड़ियाँ

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी के उपर्युक्त ब्यौरे को पढ़कर हम अनुमान लगा सकते हैं कि विचार प्रणाली के आधार पर गुरवाणी का चुनाव करते समय सम्पादक को कितनी अधिक मेहनत करनी पड़ी होगी। इस पावन ग्रन्थ के सबसे पुराने कवि जैदेव तथा फरीद जी हैं जो कि बारहवीं सदी में हुए थे तथा सबसे अन्तिम रचनहार नौवें गुरू जी हैं। नौवें गुरू तेग बहादर जी ने औरंगजेब के हुक्म से सन् 1675 ई. को शहीदी प्राप्त की, इसलिए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर आई वाणी बारहवीं शताब्दी से लेकर सतारहवीं शताब्दी तक के कुछ प्रसिद्ध कवियों की वाणी है। 'करतारपुर वाली बीड़' में केवल सोलहवीं सदी तक के कुछ विशेष भक्तों तथा छः गुरू साहिबानों तथा सन्तजनों की वाणी शामिल है।

आदि ग्रन्थ साहिब को श्री गुरू अरजन देव जी ने सन् 1604 ई. में अमृतसर में सम्पादित किया तथा भाई गुरदास जी के हाथों लिखवाया।

गुरू अरजन देव जी ने न केवल सिक्ख गुरुओं तथा पंजाब के सन्तों व भक्तों की वाणी को एकत्र किया बल्कि भारत के पृथक-पृथक प्रान्तों के महापुरुषों की रचना को भी आदि ग्रन्थ में शामिल किया। जैदेव, बंगाल का भक्त था, नामदेव तथा त्रिलोचन महाराष्ट्र के, रामानन्द व कबीर आदि उत्तर प्रदेश के। आदि ग्रन्थ के सन्त कवि चारों वर्णों में से थे। जैदेव ब्राह्मण था, गुरू साहिबान क्षत्रिय, त्रिलोचन वैश्य तथा नामदेव, कबीर, सैण, सधना तथा रविदास शूद्र जातियों में से थे। नामदेव छींबा था, कबीर जुलाहा, सैन नाई, सधना कसाई तथा रविदास चमार (लेकिन गुरमति में जाति-पात के तौर पर कोई भेदभाव नहीं है)। यही कारण है कि आदि ग्रन्थ का उपदेश चारों वर्णों अर्थात सबके लिए सांझा है। आदि ग्रन्थ के सम्पादन के समय छज्जू, कान्हा, पीलू तथा शाह हुसैन गुरू अरजन देव जी के पास अपनी-अपनी वाणी को इस पावन ग्रन्थ में शामिल करवाने के लिए आए लेकिन गुरू जी ने विचार-प्रणाली के आधार पर उनकी रचना को स्वीकार नहीं किया।

जब गुरू गोबिन्द सिंह जी का ब्रह्मलीन होने का समय आया तो उन्होंने ग्रन्थ साहिब (आदि ग्रन्थ) जी का प्रकाश करके, इनके आगे पाँच पैसे व एक नारियल रखकर श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी को गुरू पदवी देकर फतह बुलाते हुए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की परिक्रमा की और खालसा जी को कहा -

गुरु ग्रंथ जी मानिओ प्रगट गुराँ दी देह,
जा का हिरदा सुध है खोज शबद में लेह।

आदि ग्रन्थ जी में आई वाणी की श्रृंखला इस प्रकार से है - 1. जपुजी, 2. रहिरास, 3. सोहिला।

भिन्न-भिन्न रागों में जिन गुरू साहिबानों तथा भक्तों की वाणी दर्ज है, उन रागों की श्रृंखला इस प्रकार से है -

1) श्री राग, 2) माझ, 3) गउड़ी, 4) आसा, 5) गुजरी, 6) देवगंधारी, 7) बिहागड़ा, 8) वडहंस, 9) सोरठि, 10) धनासरी, 11) जैतसरी, 12) टोडी, 13) बैराड़ी, 14) तिलंग, 15) सूही, 16) बिलावल, 17) गौंड, 18) रामकली, 19) नट नारायण, 20) मालीगउड़ा, 21) मारू, 22) तुखारी, 23) केदारा, 24) भैरव, 25) बसन्त, 26) सारंग, 27) मलार, 28) कानड़ा, 29) कल्याण, 30) प्रभाती, 31) जैजावन्ती।

इन रागों में शबदों की श्रृंखला इस प्रकार से है -

1) चउपदे, दुपदे, तिपदे, पंचपदे या छिपदे, घर तथा महला अनुसार श्रृंखलाबद्ध

2) अष्पदियाँ, घर तथा महला अनुसार श्रृंखलाबद्ध

3) सोहले (मारू राग में घरु तथा महला अनुसार

श्रृंखलाबद्ध)

4) गुरू साहिबान की कोई विशेष रचना घर तथा महला अनुसार श्रृंखलाबद्ध

5) छन्त, घर तथा महला अनुसार श्रृंखलाबद्ध

6) वारें, घर तथा महला अनुसार श्रृंखलाबद्ध तथा उनके पश्चात कोई अन्य वार

7) भगता दी बाणी, पहले कबीर फिर नामदेव की इत्यादि (घर, संगीत का पद है तथा महला शबद इस प्रकार के अर्थों में गुरू साहिबान के लिए प्रयुक्त हुआ है)

श्लोक तथा सवैये जिन की श्रृंखला इस प्रकार से है-

1) सलोक सहसक्रिती, 2) गाथा, फुनहे, 4) चउबोले, 5) सलोक कबीर, 6) सलोक फरीद, 7) सवैये गुरू अरजन देव, 8) भट्टां दे सवैये, 9) सलोक वारां ते वधीक, 10) नौवें महले के सलोक, 11) मुंदावणी के दो श्लोक।

क) भाषा - आदि ग्रन्थ में भारत के पृथक-पृथक भागों के सन्तजनों व भक्तों की वाणी होने के कारण कई बोलियाँ व उप बोलियां मिलती है। डाक्टर टरम्प ने तो यहाँ तक कहा है कि सिक्ख (गुरू) ग्रन्थ का महत्व भाषा के क्षेत्र में बहुत अधिक है। यह तो प्राचीन हिन्दवी उपभाषाओं का खजाना है। गुरू ग्रन्थ में बोली का सबसे पुराना नमूना भक्त जैदेव जी के दो शबद हैं। एक शबद राग गूजरी में है तथा दूसरा राग मारू में है। राग गूजरी वाले शबद में भले ही सन्धि के नियमों का पालन किया गया है लेकिन यह शबद संस्कृत में नहीं हैं। डा. टरम्प के अनुसार यह शबद संस्कृत तथा गंवारू भाषा का सम्मिश्रण है। इस शबद में तथा दूसरे शबद में बोली के कई अन्य इस प्रकार के खासे मिलते हैं जो डाक्टर तागरे (कर्ता - हिस्टारिकल ग्रामर आफ अपभ्रंश) की खोज अनुसार पूर्वी अपभ्रंश के खासे हैं।

भक्ति लहर के उभार के द्वारा सन्त बोली भी खूब फली व फूली और इसके प्रभाव के समाप्त हो जाने से सन्त भाषा भी साहित्यक माध्यम के तौर पर समाप्त हो गई। आदि ग्रन्थ के सारे सन्तजनों ने सन्त भाषा का प्रयोग नहीं किया। केवल उन भक्तों या सन्तजनों ने इस भाषा में बाणी की रचना की जो भिन्न-भिन्न मतों व देशों के अथवा विभिन्न भागों के सन्त महात्माओं के साथ गोष्ठी कर सके। उदाहरण के तौर पर श्री गुरू नानक देव जी तथा गुरू अरजन देव जी अपनी बहुत सारी वाणी सन्त भाषा में ही रची लेकिन दूसरे तीसरे और चौथे गुरू साहिबान ने अपने क्षेत्र की बोली में ही प्रचार किया।

आदि ग्रन्थ का बड़ा भाग सन्त भाषा में ही है लेकिन कुछ रचनाएँ पश्चिमी हिन्दी, पूरबी हिन्दी, पश्चिमी पंजाबी, पूरबी पंजाबी तथा सिन्धी में भी प्राप्त होती हैं, गुरू तेग बहादर जी के श्लोक पश्चिमी हिन्दी में हैं। भट्टों की रचनाएँ बृजभाषा या पूरबी हिन्दी में हैं। सहसक्रिती पूरबी पंजाबी तथा पश्चिमी पंजाबी के उदाहरण जैतसरी की वार, महला पाँचवां में से ही मिल जाते हैं। जैसे कि निम्नलिखित उदाहरण में प्रथम श्लोक सहसक्रिती में है, दूसरा श्लोक पश्चिमी पंजाबी में तथा पउड़ी पूरबी पंजाबी में है -

सलोक

द्रिसटंत एको सुनीअंत एको वरतंत एको नरहरह ॥
नाम दानु जाचंति नानक दइआल पुरख क्रिपा करह॥
हिकु सेवी हिकु संमला हरि इकसु पहि अरदासि॥
नाम वखरु धनु संचिआ नानक सची रासि ॥ पउड़ी ॥
प्रभ दइआल बेअंत पूरन इकु एहु ॥
सभु किछु आपे आपि दूजा कहा केहु ॥
आपि करहु प्रभ दानु आपे आपि लेहु ॥
आवण जाणा हुकमु सभु निहचलु तुधु थेहु ॥
नानकु मंगै दानु करि किरपा नामु देहु ॥ 20 ॥ 1 ॥

अंग - 710

उपर्युक्त भाषाओं और उप भाषाओं के अतिरिक्त श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी में गुजराती पूरबी मारवाड़ी, बांगरू, दक्षिणी जोगली तथा अवधी के कुछ शब्द व प्रत्यय भी मिलते हैं।

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार केवल परमात्मा एक व अनादि है। वह कर्तापुरुष है और प्रकृति उसके द्वारा पैदा की हुई है, इसलिए तीन गुण उसी की रचना हैं। वह जीव पुरुषों से इस बात के लिए भिन्न हैं क्योंकि वह आदि पुरुष है, सति पुरुष है, कर्ता पुरुष है, अकाल पुरुष है। वह निरभउ, निरवैर, अजूनी सैभं है। वह निरगुण भी है तथा सरगुण भी है, संसार की रचना से पहले वह शून्य समाधि में लीन था। वही ब्रह्म है तथा वही ईश्वर है। पैदा करना, पालन पोषण करना तथा समाप्त करना ये उसकी तीन शक्तियाँ हैं, जिन्हें ब्रह्म, विष्णु तथा शिव का नाम दिया गया है। वह सर्वव्यापी तथा सर्व शक्तिमान है, प्रत्येक रंग में वह स्वयं ही व्याप्त है। श्री गुरू अरजन देव जी का वचन है -

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै ॥

अंग - 846

गुरवाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 50)

सिरीरागु महला 3

मनमुख करम कमावणे जिउ दोहागणि तनि सीगारु॥

हे बन्धु! जो मनमुख लोग गुरुमुखों की नकल करते हुए कर्म कमावणे = कमाते हैं वे ऐसे हैं जैसे कि दोहागणि = अवारा स्त्री अपने तनि = शरीर पर श्रृंगार करती है भावार्थ जो अवारा स्त्री सुहागिन स्त्रियों की नकल करते हुए अपने शरीर का श्रृंगार करती है, गहने आदि सजा कर भड़कीले वस्त्रों को धारण कर लेती है लेकिन वह पति-सुख को प्राप्त नहीं कर पाती है, इसकी बजाए उसका यह श्रृंगार व साज-सज्जा व्यभिचार का कारण बनते हैं अथवा हे भाई! जो गुरू साहिब का उपदेश धारण करना है, वह सुहागिनों का सा कार्य है जबकि गुरू उपदेश को धारण न करना और केवल गुरुमुखजनों की नकल करना अवारा स्त्रियों का सा कार्य है, यही कारण है कि मनमुख जन परमात्मा रूपी पति के आनन्द की अनुभूति नहीं कर पाते हैं।

सेजै कंतु न आवई नित नित होइ खुआरु॥

फिर इस प्रकार के तथाकथित श्रृंगारों का क्या लाभ है, यदि अन्तःकरण रूपी सेज पर प्रभु रूपी कन्त ही न आवई = आया भावार्थ प्रभु जी का साक्षात्कार ही न पाया फिर तो वह दुगागिन (अवारा) स्त्री नित्यप्रतिदिन खुआरु = दुखी हो होगी।

पिर का महलु न पावई
न दीसै घरु बारु॥1॥

वह जीव रूपी अवारा स्त्री पिर = पति के महलु स्वरूप रूपी टिकाने को नहीं पावई = पा सकती है। भले ही पति इनके घर के बारु = दरवाजे पर ही होता है, लेकिन इन्हें उसका मिलाप नहीं हो पाता है अथवा वह है तो सभी हृदयों में लेकिन उन्हें दिखाई नहीं पड़ता है, अथवा वह प्रभु रूपी पति इसके बारू = अन्तःकरण रूपी घर में ही उपस्थित है लेकिन उसे दर्शन नहीं होते हैं, फलस्वरूप वे ज्ञान-विहीन दुखी हुए घूमते रहते हैं।

भाई रे इक मनि नामु धिआइ॥

हे बन्धु! यदि उस परमात्मा को मिलना चाहते हो तो फिर एक मन हो उसके नाम का सिमरन करो।

संता संगति मिल रहै जपि राम नामु सुखु पाइ॥1॥रहाउ॥

साथ ही परमात्मा के प्यारे सन्तजनों की संगत में मिलकर रहो। इस विधि से यदि तुम राम = प्रभु जी के नाम को जपोगे तो फिर सुख-स्वरूप को प्राप्त कर लोगे। रहाउ।

गुरमुखि सदा सोहागणी पिरु राखिआ उर धारि॥

हे बन्धु! जो गुरुमुख रूपी स्त्रियाँ हैं वे सदा = सदैव सुहागणी = सुहागिनें हैं उन्होंने प्रभु रूपी पिरु = पति को उरधारि = हृदय में धारण करके रखा है भावार्थ अपने दिल में बसा कर रखा है।

मिठा बोलहि निवि चलहि सेजै रवै भतारु॥

जो पतिब्रता धर्म का पालन करती हुई हमेशा मधुर वचन बोलती है तथा नम्रतापूर्वक चलती रहती है भावार्थ जो संसार के अन्दर नम्रतापूर्वक विचरण करती हैं, उनकी अन्तःकरण रूपी सेज पर प्रभु रूपी भतारु = पति रवै = रमण करता है भावार्थ उन्हें अपने अन्दर अभेद कर लेता है।

सोभावंती सोहागणी जिन गुर का हेतु अपारु॥2॥

ऐसी महात्मा रूपी सुहागिनें, भक्ति के कारण सौभाग्यशाली हैं, जिन्हें गुरू साहिब का अपारु = अत्यन्त हेतु = प्यार प्राप्त है।

पूरे भागि सतगुरु मिलै जा भागै का उदउ होइ॥

हे भाई! उस समय उत्तम भाग्य की बदौलत तथा निष्काम कर्मों को करने की वजह से पूर्ण सतगुरू की प्राप्ति होती है जा = जिस समय निष्काम कर्मों की बदौलत भागै = अच्छे भाग्य का उदय = प्रकटीकरण होइ = होता है।

अंतरहु दुखु भ्रमु कटीऐ सुखु परापति होइ॥

उनके अन्दर का जन्म-मरण का दुख तथा स्वरूप रूपी पाँचों प्रकार के भ्रम कटीऐ = कट जाते हैं तथा उन्हें आत्मिक सुखों की प्राप्ति भी हो जाती है।

गुर कै भाणै जो चलै दुखु न पावै कोइ॥

हे भाई! जो गुरुमुखजन गुरू साहिब की भाणै = रजा में चलते हैं, उन्हें कोई भी दुख नहीं मिलता है, भावार्थ उन्हें लोक व परलोक में कोई भी दुख सहन नहीं करना पड़ता है।

गुर के भाणे विचि अंम्रितु है सहजे पावै कोइ॥

सतगुरू के भाणे = हुक्म में चलने के कारण ही नाम रूपी अमृत अथवा आत्मानन्द रूपी अमृत की प्राप्ति होती है जो सहजे = सहज स्वभाव ही सतगुरू जी की आज्ञा में चलता है वही इस दात को प्राप्त कर पाता है।

जिना परापति तिन पीआ हउमै विचहु खोइ॥

जिन्हें सतगुरू द्वारा यह नाम रूपी अमृत प्राप्त हुआ है, उन्होंने ही इसे पीआ = पिया है तथा उन्होंने ही हउमै को मन में से खोइ = समाप्त किया है।

नानक गुरमुखि नामु धिआईऐ सचि मिलावा होइ॥4॥13॥46॥

सतगुरू जी फुरमान करते हैं कि जब गुरुमुखजनों की संगत करके प्रभु जी के नाम का जप किया जाता है तो फिर सत्य स्वरूप प्रभु जी का मिलावा = मिलाप हो जाता है।

सिरीरागु महला 3

जा पिरु जाणै आपणा तनु मनु अगै धरेइ॥

हे सखी! यदि तुम प्रभु जी रूपी पिरू = पति को अपना जानती हो कि वह मेरा प्यारा है तो फिर अपना तन व मन उसके आगे धरेहि = रख दो भावार्थ उसे सौंप दो।

सोहागणी करम कमावदीआ सेई करम करेइ॥

जो सुहागिनें पति की आज्ञा का पालन रूपी कर्म कमावदीआं = करती है सेई = उसी प्रकार के कर्म तुम भी करो भावार्थ हे गुरुमुख सखी! तुम उस प्रभु रूपी पति को प्राप्त करने के लिए वही कर्म करो जो कि सुहागिनें, अपने पति को प्रसन्न करने के लिए करती हैं।

सहजे साचि मिलावड़ा साचु वडाई देइ॥

उन गुरमुख सखियों को सहजे = सहज स्वभाव ही साचि = सत्य स्वरूप प्रभु जी का मिलावड़ा = मिलाप होता है तथा उन्हें सच्चा प्रभु अपने स्वरूप की प्राप्ति की बडाई = प्रशंसा प्रदान कर देता है।

भाई रे गुर बिनु भगति न होइ॥

हे भाई! सतगुरू जी की प्राप्ति के बिना प्रभु जी की भक्ति नहीं होती है -

बिनु गुर भगति न पाईऐ
जे लोचै सभु कोइ॥1॥रहाउ॥

गुर = सतगुरू जी की भगति = भक्ति के बिनु = बिना परमेश्वर को नहीं पाईऐ = पाया जा सकता है अथवा गुरू के बिना प्रेम भक्ति नहीं पाई जा सकती है, जे = जबकि सभ कोइ = प्रत्येक व्यक्ति यही लोचै = चाहता है

लख चउरासीह फेरु पइआ कामणि दूजै भाइ॥

जो मनमुख जीव रूपी कामणि = स्त्रियाँ दूजै भाइ द्वैत भाव में लगी हुई हैं, उन्हें चउरासीह = चौरासी लाख योनियों के फेरु = चक्कर में पड़ना पड़ता है।

बिनु गुर नीद न आवई दुखी रैणि विहाइ॥

उन्हें सतगुरू जी के बिना शान्ति रूपी नींद नहीं आती है, जिस कारण से उनकी आयु रूपी रैणि = रात्रि दुखों में ही विहाइ = व्यतीत हो जाती है।

बिनु सबदै पिरु न पाईऐ बिरथा जनमु गवाइ॥2॥

बिन सबदै = गुरू जी के उपदेश के बिना अकालपुरुष रूपी पिरु = पति नहीं पाईऐ = पाया जा सकता है अतः वे (मनसुख रूपी जीव स्त्रियाँ) वाहिगुरू जी की प्राप्ति के बिना बिरथा = व्यर्थ ही मनुष्य जन्म गवाइ = गँवा रही हैं।

हउ हउ करती जगु फिरी ना धनु संपै नालि॥

जीव रूपी स्त्री अथवा सारी दुनिया ही हउ-हउ = मैं, मैं करती घूम रही है, भावार्थ कोई अपने ज्ञान का गर्व करता

(शेष पृष्ठ 55 पर)

वारां भाई गुरदास
स्टीक

डा. भाई वीर सिंह जी

24. पउड़ी (गुर नानक देव जी दा पहिला प्रसंग)

पहिला बाबे पाया बखसु दरि, पिछो दे फिरि घाल कमाई।
रेतु अकु आहारु करि, रोड़ा की गुर करी विछाई।
भारी करी तपसिआ, वडे भागु हरि सिउ बणि आई।
बाबा पैधा सचखंडि, नउ निधि नामु गरीबी पाई।
बाबा देखै धिआन धरि, जलती सभि प्रिथवी दिसि आई।
बाझहु गुरु गुबार है, है है करदी सुणी लुकाई।
बाबे भेख बणाइआ उदासी की रीति चलाई।
चड़िआ सोधणि धरति लुकाई॥

बखसि दरि = दरगाह से बख्शीश का दरवाजा, घाल = मेहनत पैधा = पहनाया गया, सम्मान की पोशाक मिली।

श्री गुरू नानक देव जी ने पहले अकालपुरष की दरगाह से कृपादृष्टि प्राप्त की, उसके बाद आपने तप साधना की भावार्थ वाहिगुरू जी ने उन्हें पहले से ही निवाज कर भेजा था और यहाँ पर आकर उन्होंने फिर प्रेम-भक्ति की। रेत तथा मदार का भोजन करते हुए आपने ईंट-रोड़ों का बिस्तर बनाया भावार्थ आपने दुखों व क्लेशों को सहारा और बहुत कठिन तपस्या की। भाग्य की महानता के फलस्वरूप वाहिगुरू जी आपके ऊपर अत्यन्त प्रसन्न हो गए। वाहिगुरू जी की प्रसन्नता के कारण गुरू बाबा जी को सच्चखण्ड से सम्मान की पोशाक प्राप्त हुई भावार्थ नौ निधियाँ, नवधा भक्ति, नाम तथा विनम्रता, आपको प्राप्त हो गई। इसके बाद जब गुरू बाबा जी ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा तो आपको सारी पृथ्वी जलती हुई यानि कि पापों से पीड़ित दिखाई पड़ी, चहुँओर गुरू के बिना घोर अन्धकार छाया हुआ और सारी जनता हाय-हाय करती हुई सुनी। अब बाबा जी ने शरीर धारण किया और माया से उदास रहने की रीति चला दी। इसके बाद सारी जनता के कल्याणार्थ आपने प्रस्थान कर दिया।

25. (तीरथाँ पर प्रेम दी सुंञ)

बाबा आइआ तीरथै तीरथ पुरब सभे फिरि देखै।
पूरब धरम बहु करम करि भाउ भगत बिनु किते न लेखै।
भाउ न ब्रहमै लिखिआ चारि बेदि सिंम्रिति पड़ि पेखै।
ढूंडी सगली प्रिथवी सतिजुगि आदि दुआपरि त्रेतै।
कलिजुगि धुंधूकार है भरमि भुलाई बहु बिधि भेखै।
भेखी प्रभू न पाईऐ आपु गवाए रुप न रेखै।

गुरमुखि वरनु अवरन होइ निव चलणा गुर सिखि विसेखै॥
ता कुछ घालि पवै दरि लेखै॥

भाउ = प्रेम, सिंम्रिति = स्मृतियाँ (हिन्दू धर्म के ग्रन्थ) भेखे = चिन्ह या भेष, विसेखै = विशेषता।

जब बाबा तीर्थों पर आया तो आपने तीर्थों के दिवस व त्योहारों जैसे कुम्भ व ग्रहण आदि मेलों को घूम-घूम कर देखा। वहाँ पर लोग धर्म-कर्म तो खूब करते थे लेकिन प्रेम-भक्ति के बिना वे सब निरर्थक ही थे। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो ब्रह्मा जी ने प्रेम-भक्ति के बारे में तो कहीं लिखा ही नहीं था। चारों वेद तथा स्मृतियों को खूब पढ़-पढ़ कर देखा लेकिन प्रेम भक्ति का प्रत्येक जगह अभाव ही था भावार्थ पण्डित लोग वेदाध्ययन तो खूब करते हैं लेकिन प्रेमा भक्ति की दृष्टि से पूर्णत: खाली ही हैं। बाबा जी ने सारी पृथ्वी ढूंढ़ी, सत्युग, द्वापर व त्रेता युगों के हालातों का विश्लेषण किया और कल्युग की भी खूब पड़ताल की लेकिन आपने देखा कि सर्वथा अज्ञानता का घना अन्धकार ही दिखाई पड़ा और सारी जनता को भेषों व भ्रमों ने अपने जाल में फँसा रखा है। भेषों को धारण कर लेने मात्र से परमात्मा की प्राप्ति कैसे हो सकती है? यदि हउमै का त्याग कर दिया जाए तो फिर किसी भी भेष व रूप का कोई तात्पर्य नहीं रह जाता है। दरअस्ल विभिन्न भेषों का आधार यह अहंभाव ही है। गुरुमुख जो है, वह चाहे उच्च जाति का हो और चाहे निम्न जाति का हो, वह विनम्रता को धारण करे तभी उसके द्वारा की गई नाम की कमाई वाहिगरू के द्वार पर लेखे में पड़ेगी।

26. (उस समें दे हालात)

जती सती चिरुजीवणे साधिक सिध नाथ गुरु चेले।
देवी देव रिखीसुरा भैरउ खेत्रपालि बहु मेले।
गण गंधरब अपसरा किंनर जख चलिति बहु खेले।
राकसि दानो दैत लख अंदरि दूजा भाउ दुहेले।
हउमै अंदरि सभि को डुबे गुरु सणे बहु चेले।
गुरमुखि कोइ न दिसई ढूंडे तीरथि जात्री मेले।
डिठे हिंदू तुरकि सभि पीर पैकंबडि कउमि कतेले।
अंधी अंधे खूहे ठेले॥

जती = ब्रह्मचर्य धारण करने वाले, जितेन्द्रिय, सती सत्यवादी, गुण सेवकों का दल (समूह)

जती, सती, चिरंजीवी, साधना करने वाले, सिद्ध, नाथ, गुरू तथा चेले, देवी-देवते, ऋषि, क्षेत्रफल (नामा भैरव आदि) आदि बहुत सारों को, लोगों ने एकत्र करके रखा हुआ है, इसी प्रकार से नन्दीगण आदि शिव जी के गण, गन्धर्व अप्सराएँ, किन्नर, यक्ष (जादूगर आदि) राक्षस, दानव (दनू के पुत्र) दैत्य (दिती के पुत्र) लाखों दूसरे प्यार में दुखी होते हैं (भावार्थ वे एक को छोड़कर दूसरे भाव वाले हैं, अथवा इनके पुजारी वाहिगुरू जी को भूलकर और दूसरे में प्रेमभाव रख-रख कर दुखी हैं और सभी हउमै में पड़े हुए हैं तथा अधिकांश गुरू चेलों समेत डूब चुके हैं। गुरुमुखजन तो कोई भी दिखाई ही नहीं देता है। गुरू जी ने तीर्थों के मेलों पर बहुत खोज करके देख लिया है। हिन्दू, तुर्क, सारे पीर-पैगम्बर आदि को देख लिया है कि अन्धों ने अन्धों को कुएँ में धकेला हुआ है।

'चलता'

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल', एम. ए., एम. फिल.

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 54)

चलो हम परमात्मा को सत्य का रूप मान लें कि परमात्मा सत्य के अन्दर निवास करता है अथवा यूँ कह लो कि आनन्द में निवास करता है क्योंकि केवल सत्य ही हमें प्रसन्नता या आनन्द प्रदान कर सकता है। आनन्द या खुशी ही वास्तव में दोनों मार्गों का लक्ष्य है। किसी चीज के बिना खुश होना, इस खुशी को स्वार्थहीन खुशी कहते हैं, निःस्वार्थ खुशी कहते हैं।

कुछेक बातें ऐसी हैं, जिन्हें कि पारिवारिक जीवन वाले गृहस्थी ही समझते हैं क्योंकि त्यागी ने जीवन जीने की उस विधि से तरक्की नहीं की है। एक गृहस्थी शुरू से ही प्यार चाहता है, वह शरीर के माध्यम से ही अपनी पहचान बताता है। तुम यह कह सकते हो कि एक गृहस्थी की अपनी एक पहचान है, मैं दूसरों की अपेक्षा भिन्न हूँ, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। तुम देखते जाओगे कि तुम जैसे-जैसे निःस्वार्थ प्यार का अर्थ समझते जाओगे, तुम्हें जीवन के अर्थ समझ में आने लग पड़ेंगे। एक गृहस्थी होने के नाते तुम प्रयोग करते हो। बहुत सारे लोगों के लिए पारिवारिक जीवन एक किले की भांति है। लोग नहीं जानते हैं कि उस किले में से बाहर कैसे निकला जाए और जो इस किले से बाहर है वे अन्दर जाने की कोशिश कर रहे हैं, लेकिन इस तरह से होना नहीं चाहिए। पारिवारिक जीवन तो एक बाग की तरह से, एक फुलवाड़ी की तरह से होना चाहिए, जहाँ पर रहकर, हम स्वयं को सुखी महसूस कर सकें, खुश रह सकें।

प्यार का अर्थ है - विकास और विस्तार

जीवन का एक मात्र उद्देश्य है प्यार को समझना लेकिन बहुत सारे लोग इस बात को समझते ही नहीं हैं। जब दो लोग मिलते हैं तो वे एक दूसरे से प्यार बन्धन में बँध जाते हैं लेकिन फिर वे पृथक-पृथक हो जाते हैं, वे भयभीत हो जाते हैं, वे सोचते हैं कि विवाह कोई अच्छी चीज नहीं है, लेकिन यह बात सत्य नहीं है। समस्या तो इस बात की है कि एक व्यक्ति जिस प्रकार से सोचता है, दूसरा उस प्रकार से नहीं सोचता है, उनकी सोच एक दूसरे से अलग हो जाती है, यही कारण है कि उनका पारस्परिक टकराव उत्पन्न हो जाता है, द्वन्द्व पैदा हो जाता है। यदि ये द्वन्द्व जमा होते रहते हैं तो फिर ये बीमारी का कारण बन जाते हैं, इसीलिए अपनी निजी जिन्दगी में कभी भी द्वन्द्व को उत्पन्न न होने दो। आओ देखें कि सुन्दर जीवन किस प्रकार से जिया जाए, खुशी भरा जीवन किस प्रकार से जिया जाए? यदि दो लोग एक दूसरे को अच्छी तरह से समझ सकते हैं, जान सकते हैं, शारीरिक तौर पर एक हो सकते हैं तो वे इस बात को भी भली भांति जान लें कि वे दोनों न केवल बहुत खुश हो सकते हैं बल्कि वे दोनों मिलकर बहुत अच्छे-अच्छे कार्य भी कर सकते हैं, समाज और संसार को कोई देन दे सकते हैं।

संसार की सर्वाधिक प्राचीन चीज है - प्यार। इस पृथ्वी से पहले उस सर्व समर्थ व सर्वज्ञाता ने अपने अस्तित्व के द्वारा संसार का सृजन किया और फिर सत्य की शक्ति का प्यार के द्वारा विस्तार किया। प्यार का अर्थ है - विस्तार। प्यार के विपरीत है - घृणा। जब कोई वह नहीं कर रहा है जो कि तुम चाहते हो यानि कि जो तुम्हारी आशा के विपरीत चल रहा है तो फिर तुम अपने व्यक्तित्व को संकोच लेते हो, तुम स्वयं को पृथक कर लेते हो, अतः जीवन के दो सिद्धान्तों पर चलते हैं तो हम स्वयं को एकत्र कर लेते हैं और हम अपनी पहचान ही भूल जाते हैं। हमारी शख्सियत व हमारा आचरण नफरत के कारण बदल जाता है और हम विस्तार के सिद्धान्त को समझते ही नहीं हैं।

प्रत्येक मनुष्य दो संसारों में रहता है। हम अपने अस्तित्व

को कायम ही नहीं रख सकते हैं, जब तक कि हम दोनों संसारों को समझ न लें यानि कि यह जान न लें कि हम दोनों संसारों के नागरिक हैं। एक वह संसार जो कि हमारे अन्दर है तथा दूसरा वह संसार जो कि हमारे बाहर है। सर्वोत्तम मनुष्य वही है जो कि आन्तरिक संसार और बाह्य संसार के बीच एक पुल का निर्माण कर लेता है। दरअस्ल जब तक हम आन्तरिक तौर पर खुश नहीं हैं, तब तक हम दूसरों को खुश नहीं कर सकते हैं। दूसरों को खुश करने के लिए पहले स्वयं खुश होना पड़ता है। जब तक हम संकुचित भाव में रहेंगे, अपने अन्दर की तरफ सिकुड़ते रहेंगे। हउमै भाव में रहेंगे तब तक हम खुश नहीं रह सकेंगे। हम में से बहुत सारे लोगों की यह समस्या है कि जो कुछ हमने बचपन में किया है उसे हम मिटाना चाहते हैं, परिणामस्वरूप हम न तो कहीं भी पहुँच पाते हैं और न ही कोई तरक्की ही कर पाते हैं। यह सब कुछ करने के स्थान पर हमें उदार होना चाहिए और हमें स्वयं को विस्तृत करना चाहिए।

बचपन बहुत ही महत्वपूर्ण है। प्रत्येक माँ को जो स्त्री से माँ बनने जा रही है, यह बात समझ लेनी चाहिए कि कभी भी कोई भी समाज किसी पुरुष ने नहीं बनाया है बल्कि जो कुछ भी बनाया है, वह स्त्री ने ही बनाया है। मनुष्य तो जालिम रहा है, गैर जिम्मेदार रहा है, इस बात को तुम सारे इतिहास में देख सकते हो। स्त्री ने ही सारे समाज का सृजन किया है लेकिन आज की स्त्री गैर जिम्मदार बन चुकी है, स्त्रियों ने अपना मुख्य कार्य, कोई कारोबार या व्यवसाय करने के बारे में सोच लिया है तथा बच्चों को किसी 'आया' के पास छोड़ने का निर्णय ले लिया है। वास्तव में बच्चों से अपनी शिक्षा का आधार नहीं छीना जाना चाहिए। तुम जितना अधिक अपने बच्चों पर ध्यान दोगे, उनका उचित पालन-पोषण करोगे उतना ही अधिक बच्चा फलेगा, बच्चे का ध्यान बहुत आवश्यक है। ध्यान के बिना कुछ भी नहीं है। बचपन में ही बहुत सारे बीज बच्चे के अन्दर बोए जाते हैं, जो समय आने पर उगते हैं। सत्य आदि बहुत सारे गुण बचपन में ही बच्चों को दिए जाते हैं। अतः एक माता-पिता होने के कारण बच्चों को प्यार करो, उनके साथ विनम्र रहो, उन्हें प्यार से देखो। इस बात को याद रखो कि जीवन का उद्देश्य प्यार प्राप्त करना और प्यार को समझना है -

जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ।

प्यार का तात्पर्य है - विस्तृत होना। पारिवारिक जीवन तुम्हें बहुत कुछ सिखाता है, बिना पढ़े ही तुम्हें सिखाता है। परिवार तुम्हें अनुभव देता है और अनुभव ही सर्वोत्तम गुरू है, परिवार तुम्हारा दैनिक अनुभव है, यह तुम्हें सिखाता है कि पति को किस प्रकार से प्यार करना है, बच्चों को किस प्रकार से प्यार करना है। इसके लिए तुम्हें किताबों को पढ़ने की जरूरत नहीं है। हाँ, बच्चों का पालन करने के लिए तुम दूसरों से सलाह ले सकते हो, लेकिन प्यार करने के लिए तुम्हें सीखने की जरूरत नहीं है। नवजात शिशु को भी पता होता है कि दूध कहाँ है और कैसे पीना है। माँ के द्वारा उठाने पर ही बच्चा छाती की तरफ मुँह मारने लग पड़ता है। क्या बच्चे को ऐसा करने के लिए किसी ने सिखाया है? जानवरों को कौन पढ़ाता है? उन्हें कैसे पता लग जाता है कि दूध कहाँ से मिलेगा? हम सबके पास प्रवृत्तियाँ हैं। ये सब प्रकृति की तरफ से ही हैं और ये हमारे चेतन मन की गहराई में पड़ी रहती हैं। इसे अन्तर्ज्ञान व अन्तर्दृष्टि भी कहते हैं। इसीलिए हम जानवरों से पृथक हैं। हम स्वयं को प्रकट कर सकते हैं, अपने बारे में बतला सकते हैं। यदि हम स्वयं को प्यार पूर्वक प्रकट करें, प्यारपूर्वक बोलें और बतलाएँ तो हमारा जीवन खुश हो सकता है।

जीवन में प्यार का सफर - जीवन की यह सोच कि हमारे पास यदि कुछ भी नहीं है तो फिर हम खुश नहीं हो पाएँगे, महज एक कल्पना ही है और विडम्बना तो यह है कि हम में से बहुत सारे लोग इसी क्लपना में जीते हैं। हम कहते रहते हैं कि मेरे पास अच्छी कार नहीं है, अच्छी नौकरी नहीं है, मेरे पास अच्छा घर नहीं है, मेरी पत्नी ठीक नहीं है, मेरा पति ठीक नहीं है, इसलिए मैं खुश कैसे रह सकता हूँ? जीवन का यह कोई अच्छा तरीका नहीं है लेकिन हम ऐसे ही करते हैं और सारी जिन्दगी अपने परिवार के इर्द-गिर्द ही घूमते रहते हैं और अपने व अपने परिवार के लिए कुछ न कुछ सामान एकत्र करने में लगे रहते हैं। परेशानी की बात तो यह है कि यह सब कुछ के होते हुए भी हम खुश नहीं रह पाते हैं। दरअस्ल हम इस बात को समझते ही नहीं हैं कि यह जो कुछ भी है यह सब जीवन जीने के साधन मात्र हैं न कि साध्य हैं। यह सब कुछ प्राप्त या एकत्र करना हमारा लक्ष्य नहीं है, निशाना नहीं है, बल्कि हमारा लक्ष्य तो है - खुशी प्राप्त करना। अतः हमें खुशी प्रापप्त करने के साधन जुटाने चाहिए।

'चलता'

(पृष्ठ 38 का शेष)

ने अपने मन:स्थिति को जय राम जी के आगे रख दिया कि यह घर के काम तो करता नहीं है न जाने किस दुनिया में मस्त रहता है। फिर भी सारी विचार विमर्श के बाद पिता जी ने जय राम जी को इस बारे में आज्ञा दे दी। इसके बाद जय राम जी विदायगी लेकर चले गए।

जय राम जी ने सुल्तानपुर जाकर नवाब साहिब के साथ सारी विचार की। नवाब साहिब ने भी हामी भर दी कि मोदीखाने में एक आसामी खाली है और उसके लिए एक भले पुरुष की आवश्यकता है। अत: नवाब साहिब ने आज्ञा दे दी कि आप नानक जी को बुला लो। यदि हमें इस आसामी के लिए वह उपयुक्त लगा तो उसे इस काम पर रख लेंगे। घर आकर जय राम जी ने पत्र लिखा कि नानक जी सुल्तानपुर आ जाएँ।

पत्र पाकर जगत दाता जी सबसे विदायगी लेकर सुल्तानपुर के लिए रवाना कर गए। नानक के पिता जी ने परमात्मा का धन्यवाद किया कि (श्री) नानक जी जीविकोपार्जन हेतु कोई काम-धन्धा करने के लिए जा रहे हैं। अभी किसी को यह पता नहीं है कि श्री नानक जी ने नवाब के दौलतखाने में कौन-कौन सी बरकतें डालनी हैं। अभी उनकी नूरानी मुलाकातों का समय भी शेष था। खैर! जय राम जी के अनुसार वे एक इलाही नूर थे तथा इलाही नाद के द्वारा सारे संसार को शरशार करने के लिए आए थे। सुल्तानपुर के अन्दर जो आपने महक बिखेरी, उसका जिक्र अगली मिलनी में होगा।

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब - 12.00 बजे से 4.00 बजे तक

पूर्णमाशी - 15 अगस्त, दिन वीरवार। (शाम 7.00 बजे से 10.00 बजे तक)

संक्रान्ति - भादुइ, 17 अगस्त, दिन शनिवार। (प्रात: 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

सम्माननीया बीजी के जन्म दिवस समागम 8 अगस्त को 10.00 से 3.30 बजे तक होंगे।

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार की जगह 8 अगस्त को सुबह 11.00 बजे होगा।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in
Website : www.ratwarasahib.org
Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)
You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh
Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1
Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13
Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib
Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib
E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine
S/B A/C No. 12861000000003 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank SB A/C No. 0779000100179603
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 Branch Code - 077900

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 $
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address.....

.....

.....Pin Code..... Phone ..... E-mail :.....

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)
डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक
दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
7. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
8. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
9. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
10. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
11. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
12. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
13. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार
14. डा. कुलदीप कौर	दाँतों के विशेषज्ञ	मंगलवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी गुरुद्वारा साहिब **Fremont (U.S.A)** में
कीर्तन द्वारा संगत को निहाल करते हुए। नीचे - कीर्तन का रसास्वादन करते हुए श्रद्धालुजन

वार्षिक महान गुरमति
रूहानी समागम
30-31 अक्टूबर
1-2-3 नवम्बर 2019
सम्बन्धी प्रथम मीटिंग

25 अगस्त, दिन रविवार
10 से 1 बजे तक कीर्तन के उपरान्त
दोपहर 1.00 बजे मीटिंग आरम्भ होगी

रतवाड़ा साहिब

आत्म मार्ग के सहृदय पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

देश व विदेशों में निवास करते हुए आत्म मार्ग के सहृदय पाठकों द्वारा यह सुझाव प्राप्त हुआ है कि आत्म मार्ग का अंग्रेजी सैक्शन, मैगजीन में प्रकाशित करने की बजाए इंटरनेट मीडिया पर डाल दिया जाए ताकि अधिकाधिक पाठकगण इसका लाभ प्राप्त कर सकें। ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब ने इस सुझाव को स्वीकार करते हुए यह निर्णय लिया है कि सितम्बर 2019 से अंग्रेजी भाग के 20 पृष्ठ आत्म मार्ग मैगजीन में प्रकाशित करने की बजाए इसे इंटरनैट मीडिया पर डाल दिया जाएगा। इस प्रकार से अधिकाधिक पाठकगण इसका लाभ प्राप्त कर सकेंगे। अव सितम्बर 2019 से अंग्रेजी के 20 पृष्ठ इंटरनैट मीडिया के माध्यम से पढ़ने की कृपा करें।

ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब

www.ratwarasahib.org, www.ratwarasahib.com